KKR/182/2019-2021

RNI No. HARHIN/2012/49148

www.hamarabhumandal.com

हमारा भूमंडल

वर्ष : 10 अंक: 10 अक्टूबर, 2021

पर्यावरण एवं जन-स्वास्थ्य की मासिक पत्रिका

₹ 100/-

GEPIL
PROTECTING FUTURE

Inspiring Youth of Today

1st

… private sector initiative to receive ISO 14001 certification for integrated common hazardous waste management facility

… to establish stabilisation and solidification treatment for heavy metal bearing wastes

… to setup recovery based waste-to-energy incineration plant

… to make largest ZLD for textile effluent at cluster level

... to establish eco industrial park

… to introduce finger print and quick check analysis of waste

... in asbestos disposal and management

… to introduce software based hazardous waste vehicle tracking system (GPS)

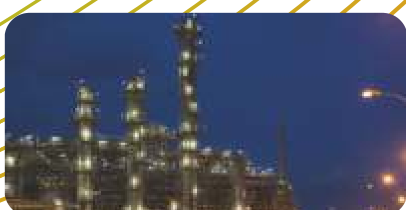

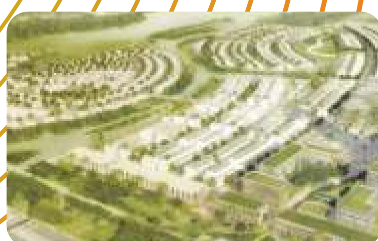

… to setup waste-preparation / AFRF for hazardous waste co-processing

GEPIL is a knowledge-based environment & infrastructure company providing sustainable solutions;

Concept to commissioning & operations on BOO / BOOT / EPC basis.

Experts in 3R; Eco-towns; Water – Wastewater treatment/recycling;

Recovery and/or disposal of hazardous waste / SW / E Waste / Alternate Fuel / nvironmentally Safe Ship Recycling.

GEPIL
PROTECTING FUTURE

GUJARAT ENVIRO PROTECTION & INFRASTRUCTURE LTD.
A Luthra Group Company

252/2 Pandesara GIDC, Surat Gujarat India.
T +91 261 289 0606-7-8 | F +91 261 289 0600
E gepil@luthraindia.com
www.gepil.in
www.luthraindia.com

Roar Studios

E-mail : hamarabhumandal@gmail.com www.hamarabhumandal.com

हमारा भूमंडल

वर्ष : 10 अंक: 10 अक्टूबर, 2021

सम्पादकीय परामर्श :

प्रो. प्रदीप माथुर, पूर्व अध्यक्ष, पत्रकारिता विभाग, भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली. मोबाइल - 981038757

श्री सुरेन्द्र कुमार, पूर्व निदेशक, केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्ली. मोबाइल - 9868072940, 9810802924

सम्पादक एवं प्रकाशक :

जगदीश चन्द्र कौशिक, मोबाइल- **+91-9416036002, 7506008274**

सज्जा एवं ग्राफिक्स : हिमांशु शर्मा 92163 24942

सम्पादकीय कार्यालय :

30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, **कुरुक्षेत्र - 136 118 (हरियाणा)**
मोबाइल -**+91-9416036002, 7506008274**
फैक्स : 01744-222869

विकास एवं विस्तार :

श्री तरुण बतरा 1085, सेक्टर-6, अर्बन इस्टेट, **करनाल**,
मोबाइल - 9416202010, 9729870010

क्षेत्रीय कार्यालय :

चण्डीगढ़ :
श्री उपकार सिंह — एस.सी.ओ.-46, द्वितीय तल, सेक्टर-20 सी, **चण्डीगढ़ - 160 020**
फोन : 0172-2722014, 3012011
फैक्स : 0172-5070704, मोबाइल - 09814069404

जम्मू :
प्रदुम्न गन्जू — 64, अमर विहार, गोल गुजराल, तालाब तिल्लू, **जम्मू - 180 002**
फोन : 0191-2504366, मोबाइल-09419112339

शिमला :
एच. आनंद. शर्मा — धारव्यू, नजदीक आई.एस.बी.टी., **शिमला - 171 004**
फोन : 0177-2814335, मोबाइल - 9418814335

दिल्ली :
श्री आर.के. गौतम — 21/12, ग्राउंड फ्लोर, शक्ति नगर, **दिल्ली - 110 007**
फोन : 011-23840245, मोबाइल - 9654649307

लखनऊ :
निरंकार सिंह — ए-13/6, पार्क रोड़ कालोनी, **लखनऊ - 222 601 (उ.प्र.)**
मोबाइल : 09451910615, 9807179204

देहरादून :
ऋषभ पुंडीर — 152, ब्लॉक-2, करणपुर, **देहरादून (उत्तरांचल) - 248 001**
मोबाइल - 09927064893

जयपुर :
सुनील कुमार वर्मा — 27, पटेल नगर, झोटवाड़ा, **जयपुर (राजस्थान)**
मोबाइल - 09214455539, 09829244439

मुम्बई :
गौरव कौशिक — बी-404, लक्ष्मी कॉम्पलैक्स, वर्तक नगर, **थाणे (पश्चिम) - 400 606**
फोन : 22-25853131, मोबाइल - 09167576453

प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी एवं संपादक जगदीश चन्द्र कौशिक द्वारा 'हमारा भूमण्डल' पत्रिका मकान नं. 30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र से प्रकाशित एवं एंकर प्रिंटिंग प्रेस, साधु मण्डी, नजदीक डाकघर, पिपली रोड़, कुरुक्षेत्र-136118 से छपवा कर अपने कार्यालय मकान नं. 30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र से मुद्रित की गई।

©
'जन-शक्ति' नामक स्वयंसेवी संस्था के अन्तर्गत प्रकाशित **'हमारा भूमण्डल'** का यह विशेषांक **'देश का पर्यावरण - जनमानस की राय'** पर आधारित है। हमारा भूमण्डल **भारतीय समाचार-पत्रों के पंजीयक के कार्यालय से पंजीकरण संख्या HARHIN/2012/49148** के तहत पंजीकृत एक मासिक पत्रिका है। पत्रिका में प्रकाशित तमाम लेख मौलिक एवं अप्रकाशित हैं एवं इनके सर्वाधिकार तथा कॉपीराइट **'हमारा भूमण्डल'** तथा **'जन-शक्ति'** के पास सुरक्षित है। अतः पत्रिका में छपे किसी भी लेख के पुनः प्रकाशन एवं अन्य उपयोग के लिए पत्रिका से अनुमति लेनी अनिवार्य है। पूर्व लिखित अनुमति के बिना पूर्ण या आंशिक तौर पर ली गई सामग्री का किसी भी रूप में प्रयोग एवं प्रकाशन अवांछनीय एवं प्रतिबंधित है।

वार्षिक-शुल्क : ₹ 1100 | **एक प्रति का मूल्य : ₹ 100**

वार्षिक-शुल्क मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा **'हमारा भूमण्डल'** के नाम पर बनाकर कोठी नं. 30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र-136118 (हरियाणा) के पते पर भेजा जा सकता है। कृपया कुरुक्षेत्र से बाहर के चैकों में ₹20 अतिरिक्त शुल्क जोड़ कर भेजें।

सम्पादकीय

समाप्त होते प्राकृतिक संसाधन, है खतरे की घंटी

प्रकृति ने मनुष्य को जीवित रहने एवं अपना विकास करने के लिए हवा और पानी जैसे अमूल्य तत्त्व तो दिए ही, उसने मानव को वनों, छायादार पेड़-पौधों, फलों एवं सब्जियों से आच्छादित जमीन तथा विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं का साथ भी दिया। अपने विकास-क्रम में मनुष्य ने बहुत से जानवरों को पालतु बनाकर उनका उपयोग अपने भोजन, खेती और पशु-पालन में किया। उसके बाद उसने उद्योग लगाए, सड़कें तथा रेलमार्ग विकसित किए। कुल मिलाकर मनुष्य ने उन्नति के तमाम आयाम तो जरूर छुए, परन्तु इस आपा-धापी में उसने प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधनों का इतना दोहन किया कि अब वे समाप्ति की ओर हैं। पृथ्वी पर अब एक ओर तो स्वच्छ पानी की इतनी किल्लत है कि विश्व के करोड़ों लोगों को स्वच्छ पानी तो क्या अशुद्ध पानी भी उपलब्ध नहीं है। दूसरे, अशुद्ध जल के कारण प्रत्येक वर्ष दुनिया के 26 लाख व्यक्तियों की जीवन लीला ही समाप्त हो जाती है। मनुष्य ने अपने लालच के लिए हरे-भरे जंगलों को काट डाला जिससे एक तो हरियाली समाप्त हो गई, और वायु मण्डल में स्वच्छ हवा की कमी होती गई। अपनी भौतिक उन्नति के लिए वातावरण को प्रदूषित करने में मनुष्य ने कोई कसर नहीं छोड़ी। उसने सड़कों पर इतने वाहन उतार दिए कि उनके धुएं से पूरा वायुमण्डल ही भर गया। किसानों ने ज्यादा फसलें लेने के लालच में जमीन को बांझ व प्रदूषित बना दिया। उन्होंने उत्पादन बढ़ाने के लिए जमींन में बेहताशा तरीके से रसायनिक खादों और जहरीली कीटनाशकों का जमकर प्रयोग किया। इतना ही नहीं, उन्होंने फसलों के अवशेष भी जलाने आरम्भ कर दिए। इन अवशेषों की आग एवं धुएं से भी वातावरण खराब हुआ। इस तरह उद्योगों से निकली गैसों, वाहनों के धुएं और किसानों द्वारा जलाए गए अवशेषों की आग से वायुमण्डल में इतनी जहरीली गैसें जमा हो गई कि 'ग्लोबल वार्मिंग' की समस्या आ खड़ी हुई। अब तो इस समस्या से पूरी दुनिया ही स्तब्ध है।

पर्यावरण प्रदूषण की इन समस्याओं पर काबू पाने के लिए न केवल सरकार बल्कि लोगों को भी प्रयत्न करने पड़ेगें क्योंकि यदि जीवन के तत्त्व ही विलीन हो गए तो इस धरा पर फिर कौन बचेगा। जाहिर है, कोई भी नहीं। अतः प्रत्येक व्यक्ति आज से ही चेतकर यह प्रण ले कि वह प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करेगा। जब यह सर्वविदित है कि कोई भी व्यक्ति प्राण वायु 'ऑक्सीजन' एवं अन्य हवाओं तथा पानी को अपने घर या फैक्ट्री में नहीं बना सकता है, तो इन तत्त्वों को दूषित या मलीन करने का उसे कोई अधिकार नहीं है। परन्तु आज मनुष्य चाहे वह किसान है, व्यापारी है अथवा उद्योगपति है, सब की आंखों पर एक छोटे से लालच का पर्दा पड़ा हुआ है। यह छोटा लालच है ज्यादा धन संग्रह करने का। इसी लालच के वशीभूत वह जमींन, हवा और जल में जहर घोलकर संभवतः थोड़े से धन का संग्रह भी कर रहा हो, जबकि उसे ज्ञात नहीं है कि भविष्य में जब जीवन देने वाले ये तत्त्व ही नहीं रहेंगे तो उसके द्वारा संग्रह किया गया धन किसके काम आएगा। मनुष्य का लालच तो यह होना चाहिए कि वह जीवन देने वाले तत्त्वों का सरंक्षण करें। प्रकृति एवं पर्यावरण के संरक्षण से ही उसे लाभ मिल सकता है और उसकी भावी पीढ़ियां बच सकती हैं। नहीं तो मनुष्य की करतूतों पर उसकी अपनी ही संतति उसे इस बात के लिए कभी माफ नहीं करेगी कि उसके पूर्वज विरासत में कितना प्रदूषित माहौल छोड़कर गए हैं। समाप्त होते प्राकृतिक संसाधन हमारे लिए खतरे की घंटी हैं। अतः उसका अर्थ समझ कर प्रदूषण पर अंकुश लगाएं और पर्यावरण को सुरक्षित करने के लिए मिलकर प्रयास करें। इसी में सबकी भलाई है।

हमारा भूमंडल

वर्ष : 10 अंकः 10 अक्टूबर, 2021

अनुक्रमाणिका

08 रेस्तरां में स्वच्छता का अभाव ग्राहकों की सेहत है दांव पर !

16 भारत भर में सिंचाई जल का समुचित प्रबंध न होने से भी बिगड़ रहा है पर्यावरण

23 आज भी कई स्थानों पर लावा उगल रही है पृथ्वी

29 जीवन और जलवायु को प्रभावित करते हैं महासागर

41 इकोलॉजी है जीवों के अन्तर्सम्बन्धों का विज्ञान

61 जटिल प्रक्रियाओं से किया जाता है संकर फलों का विकास

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

श्री भूपेंदर यादव
माननीय केन्द्रीय मंत्री,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार
C-I/12, Pandara Park, New Delhi110003
Tel:+91-11-24695132, +91-11-23011961
(Office) Residence: 011-23782833, 3782834,
Mobile: 9013181300, 9811227300 Email:
mefcc@gov.in ; bhupender.Yadav@sansad.nic.in

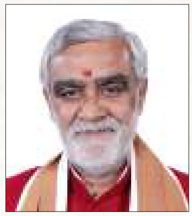

श्री अश्विनी कुमार चौबे
माननीय राज्य मंत्री,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय,
भारत सरकार
30, Dr. A.P.J. Abdul Kalam Road, New
Delhi-110 011 Tel : (011) 23017049,
9013869691 (M)

श्री रामेश्वर प्रसाद गुप्ता, आईएएस (गुजरात-1987)
सचिव, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
फ़ोन: 011- 24695262, 24695265,
24695270(F)
ईमेल: secy-moef@nic.in

श्री संजय कुमार, आईएफएस
डाइरेक्टर जनरल ऑफ फारेस्ट (वन महानिदेशक)
और विशेष सचिव
फ़ोन: 011- 24695282, 24695278,
24695412 (F)
ईमेल: dgfindia@nic.in

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, भारत सरकार

श्री शिव दास मीना आई ए एस ,
अध्यक्ष,
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड
टेलीफोन: 011- 43102202
ई-मेल: ccb.cpcb@nic.in

डॉ. प्रशांत गर्गवा
सदस्य सचिव,
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड
टेलीफ़ोन: 011- 22303655, 43102207,
43102428
ई-मेल: mscb.cpcb@nic.in
prashant_gargava@hotmail.com

पर्यावरण एवं वन विभाग हरियाणा सरकार

श्रीमती धीरा खंडेलवाल IAS
Additional Chief Secretary to Govt. Haryana,
Environment Department,
R. No. 108, 7th Floor, Main Secretariat,
Sector-1, Chandigarh
Tel: 0172-2740128
Email: dheera.acs@gmail.com

श्री कंवरपाल सिंह गुर्जर
पर्यावरण मंत्री, हरियाणा सरकार
Room No. 34/8, Secretariat,
Sector-1, Chandigarh
Tel: 0172-2740010,

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल, भारत सरकार

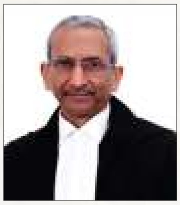

माननीय न्यायमूर्ति श्री आदर्श कुमार गोयल
माननीय अध्यक्ष,
फरीदकोट हाउस, कोपरनिकस मार्ग, नई दिल्ली-110 001
फ़ोन: 011- 23380001, 23043507
ईमेल: rg.ngt@nic.in , ngt.admn@gmail.com,
dr.ngt@nic.in

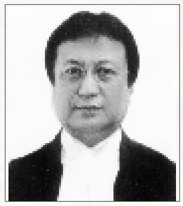

माननीय श्री सोनम फिन्स्तो वांगडी
न्यायिक सदस्य
प्रिंसिपल बेंच, नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल, नई दिल्ली
फ़ोन: 011-23043503

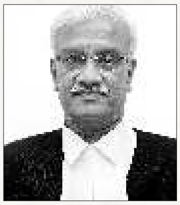

माननीय श्री के. रामकृष्णन
न्यायिक सदस्य
साउथर्न ज़ोन बेंच, चेन्नई
फ़ोन: 044-28592055

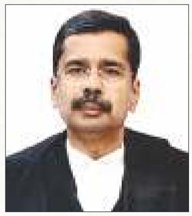

माननीय न्यायमूर्ति श्री एम सत्यनारायण
न्यायिक सदस्य

माननीय श्री एस के सिंह
न्यायिक सदस्य
प्रिंसिपल बेंच, नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल, नई दिल्ली
फ़ोन: 011-23043523

माननीय न्यायमूर्ति श्री सुधीर अग्रवाल
न्यायिक सदस्य

डॉ. नगिन नंदा
विशेषज्ञ सदस्य
प्रिंसिपल बेंच, नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल, नई दिल्ली
फ़ोन: 011-23043509

डॉ. अरुण कुमार वर्मा
विशेषज्ञ सदस्य

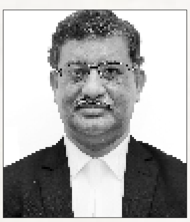

श्री सैबल दासगुप्ता
विशेषज्ञ सदस्य
साउथर्न ज़ोन बेंच, चेन्नई
फ़ोन: 044-28592056

डॉ. सत्यागोपाल कोर्लापति
विशेषज्ञ सदस्य

हरियाणा प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

डॉ. सुमिता मिश्रा
Chairperson
Haryana State Pollution Control Board
Email: pschhspcb@gmail.com,
Tel: 0172-2581005 & 2581006,
PBX – 272, Fax: 0172-2581201 .

श्री एस नारायणन, IFS
Member Secretary,
Haryana State Pollution Control Board,
C-11, Sector-6. Panchkula-134109, Haryana
Email: hspcbms@gmail.com
Tel: 0172-2581105(O),
Fax: 0172-2564093

विज्ञान, प्रोद्योगिकी एवं पर्यावरण मंत्रालय, पंजाब सरकार

श्री चरणजीत सिंह चन्नी
Chief Minister
Government of Punjab & Minister In charge
Department of Science, Technology
& Environment,
Room No.1, 2nd Floor, Punjab Civil
Secretariat, Sector - 1, Chandigarh-160001
Tel: 0172-2740325, 2740769, 2743463
Email: cmo@punjab.gov.in

श्री राहुल तिवारी, आईएएस
(Punjab 2000)
General Administration & Coordination and in addition Principal Secretary, Science Technology and Environment and in addition Principal Secretary, Parliamentary Affairs, Punjab Civil Secretariat, Sector - 1, Chandigarh-160001, Tel: 0172-2743442, Email:secy.te@punjab.gov.in

पंजाब प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

प्रो. (डॉ.) आदर्श पाल विग
Chairman,
Punjab Pollution Control Board,
Vatavaran Bhawan,
Nabha Road, Patiala- 147001
Tel: 0175-2215793
Email: chairman.ptl.ppcb@punjab.gov.in

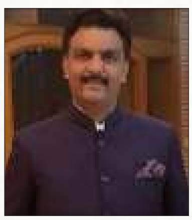

श्री क्रुनेश गर्ग
Member Secretary,
Punjab Pollution Control Board,
Vatavaran Bhawan,
Nabha Road, Patiala- 147001
Tel: 0175-2215802
Email: msppcb@punjab.gov.in

पर्यावरण मंत्रालय, हिमाचल प्रदेश

श्री जयराम ठाकुर,
Chief Minister,
Himachal Pradesh Government,
E-100, Armsdale Building, Himachal Pradesh Government Secretariat,
Shimla - 171002, Himachal Pradesh
Tel: 0177-2625400, 2625819, 2624554
Email: cm-hp@nic.in, jr.thakur@nic.in

श्री राकेश कुमार पठानिया
Forest Minister, Himachal Pradesh Government,
E-212, Armsdale Building, Himachal Pradesh Government Secretariat,
Shimla - 171002, Himachal Pradesh
Tel: 0177-2621488, 2880748
Mobile: 98160-13202
Email: tptmin-hp@nic.in

श्री प्रबोध सक्सेना, IAS
Secretary (IPR and Environment Sc. & Tech.) to the Govt. of HP + Chairman, HP State Pollution Control Board, Shimla. Him Parivesh, Phase-III,New Shimla 171009. Himachal Pradesh
Mobile: +91 8800300999,
Email: envsecy-hp@nic.in

श्री अपूर्व देवगन, IAS
Member Secretary,
H.P. State Pollution Control Board,
Him Parivesh, Phase-III,
New Shimla-171009. Himachal Pradesh
Tel: 0177 2673766
Mobile: 94184 55298
Email: Email: mspcb-hp@nic.in

चंडीगढ़ प्रशासन

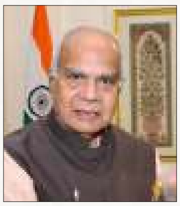

श्री बनवारी लाल पुरोहित
Hon'able Governor of Punjab &
Administrator of U.T. Chandigarh,
Punjab Raj Bhawan, Sector 6,
Chandigarh-160019
Tel: 0172- 2740740(O), 2740608 (R),
Email: admr-chd@nic.in

श्री धरम पाल, IAS
Adviser to the Administrator, U.T. Chandigarh,
Chandigarh Administration Secretariat,
Sector 9, Chandigarh-160009
Tel: 0172- 2740154 (O), 2791140 (R),
Email: adviser-chd@nic.in

चंडीगढ़ प्रदूषण नियंत्रण कमिटी

श्री देबेन्द्रा दलाई, IFS
Director Environment & Chief Conservator of Forests,
Chandigarh Administration,
Paryavaran Bhawan, Sector- 19-B,
(U.T.) Chandigarh--160019
Tel: 0172-2700284
Email: cf-chd@chd.nic.in
ccf.chandigarh@gmail.com

डॉ. विजय नामदेवराव जाड़े , IAS
Finance Secretary, Home & Environment
Chandigarh Administration,
Fourth Floor, UT Secretariat,
Sector-9, Chandigarh-160009
Tel: +91 172 2740008
Email: hs-chd@nic.in

पंजाब के मुख्यमंत्री श्री चरणजीत सिंह चन्नी का सन्देश

प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों पर सख्ती से पेश आने की है जरूरत: कैप्टन

पर्यावरण रक्षा के लिए कड़ा रुख अपनाते हुए पंजाब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिन्दर सिंह ने हर नागरिक को सांझे तौर पर प्रयास करने का आह्वान किया। उन्होंने प्रदूषण की रोकथाम के लिए पर्यावरण के मापदण्डों के पालन के लिए उद्योग के साथ सख्ती से पेश आने की जरूरत पर भी जोर दिया। मुख्यमंत्री ने कहा कि सरकार नीतियां बनाकर उनको लागू कर सकती है, लेकिन उसे वास्तविक रूप देने के लिए हर नागरिक द्वारा निजी यत्न किए जाने की जरूरत है। उद्योगों द्वारा पर्यावरण नियमों का सख्ती से पालन करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। मुख्यमंत्री ने लोगों को भूजल की संभाल के लिए जिम्मेदारी निभाने का न्योता दिया। अगले 20 साल में पंजाब के मरूस्थल बन जाने की रिपोर्टों का जिक्र करते हुए मुख्यमंत्री ने कहा कि मुफ्त बिजली और पानी के साथ इसकी बर्बादी हुई है, जिस कारण इस सम्बन्ध में किसानों को अपनी जिम्मेदारी का एहसास करने की जरूरत है।

हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर का सन्देश

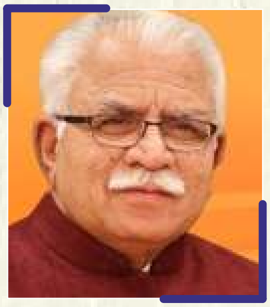

हरियाणा में हवा को स्वच्छ बनाने के लिए कर रहे हैं कड़ी मेहनत: खट्टर

हरियाणा के गुरूग्राम, फरीदाबाद, पानीपत और हिसार जैसे शहरों में बढ़ता सड़क यातायात, औद्योगिक विकास और निर्माण आदि उच्च प्रदूषण के कुछ ज्ञात कारण हैं। क्षेत्रीय स्मॉग की समस्या से निपटने के लिए, राज्य सरकार ने वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों के उत्सर्जन को कम करने के लिए कई तरह के उपाय लागू किए हैं जैसे: मोटर वाहनों, औद्योगिक और वाणिज्यिक प्रक्रियाओं, और वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों से युक्त उत्सर्जन को नियंत्रित करना। परन्तु, दुनिया के 7वें सबसे प्रदूषित शहर के लिए, हरियाणा सरकार ने केवल 12 करोड़ रूपये आवंटित किए जो प्रदूषण पर अंकुश लगाने के लिए बहुत कम राशि है। सॉल्वेंट आधारित पेंट, प्रिंटिंग स्याही, कई उपभोक्ता उत्पाद, कार्बनिक सॉल्वेंट्स और पेट्रोलियम उत्पादों के अतिरिक्त मोटर वाहन और जहाज भी वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों का उत्सर्जन करते हैं जो अंततः वायु प्रदूषण और धुंध पैदा करते हैं। क्षेत्रीय स्मॉग समस्या से निपटने के लिए, सरकार ने वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों के उत्सर्जन को कम करने के लिए कई प्रकार के उपाय लागू किए हैं, जिसमें मोटर वाहनों, औद्योगिक और वाणिज्यिक प्रक्रियाओं और उत्पादों वाले वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों से नियंत्रित उत्सर्जन शामिल हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, गुरूग्राम दुनिया का सातवां सबसे प्रदूषित शहर है। विगत दिनों मुख्यमंत्री मनोहर लाल ने 'प्रोजेक्ट एयर केयर' का अनावरण किया, जिसके तहत 65 विंड ऑग्मेंटेशन प्यूरीफाइंग इकाइयाँ गुरूग्राम में सार्वजनिक-निजी भागीदारी के माध्यम से स्थापित की जाएंगी।

हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री जय राम ठाकुर का सन्देश

हिमाचल प्रदेश सरकार पर्यावरण अनुकूल पर्यावरणीय प्रथाओं के माध्यम से प्रदेश को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं। पर्यावरणीय हस्तक्षेप के माध्यम से राज्य के लोगों के हित एवं उनकी भलाई के लिए सुधार करना ही उनका उद्देश्य है। उन्होंने लोगों से आह्वान किया है कि आओ, हम सब अपने राज्य और देश के पर्यावरण की रक्षा करें।

रेस्तरां में स्वच्छता का अभाव ग्राहकों की सेहत है दांव पर !

कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कम होते ही, भारत के अधिकांश रेस्तरां, ढाबों और सडकों के किनारे खान-पान की रेहड़ियों पर स्वास्थ्य के हितों और उचित स्वच्छता प्रथाओं की अनदेखी करके ग्राहकों को खाद्य पदार्थों के रूप में बीमारियां परोसी जा रही हैं। शहरों एवं कस्बों में ज्यादातर खान-पान की रेहडिय़ां नालों व गंदे स्थानों के नजदीक लगी हुई हैं जिससे धूल-मिट्टी व मक्खी-मच्छर भोजन को दूषित करते हैं, जबकि शहरों के प्रसिद्ध रेस्तरां में भी जब स्वच्छता की अनदेखी पाई जाए तो उसे लापरवाही नहीं तो और क्या कहेगें। वहां भोजन पकाने एवं सर्व करने वाले कर्मचारियों को स्वच्छता रखने का पर्याप्त ज्ञान एवं ट्रेनिंग ही नहीं है। वे उन सब बातों से अनजान हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए जरुरी हैं। यदि कोई कर्मचारी व्यक्तिगत रूप से साफ़-सुथरा नहीं है, तो वह अन्य लोगों की स्वच्छता और उनके स्वास्थ्य को भी दांव पर लगा सकता है। हालांकि, उसको इन बातों से कोई लेना-देना नहीं है। रेस्तरां का कोई भी कर्मचारी प्राय: गैर-हाजिर हो कर अपने काम और अपने वेतन को नुकसान नहीं पहुंचाना चाहता है, इसलिए वह अपनी बीमारी की हालत में भी हाजिर रहने का प्रयत्न करता है। परन्तु, इस से रेस्तरां के ग्राहकों की सेहत भी दांव पर लग जाती है।

यदि रेस्तरां-कर्मी बीमार है और उसे उपचार की तुरंत जरूरत है, तो खाद्य सेवा ऑपरेटरों/प्रदाता को बिना उसका वेतन काटे ही उस का इलाज कराना चाहिए। कर्मचारियों के बीमार होने पर उनकी व्यक्तिगत स्वच्छता बहुत प्रभावित हो जाती है। इसलिए कर्मचारियों को स्पष्ट रूप से कहना होगा कि भले ही वे बीमार हों, उन्हें व्यक्तिगत स्वच्छता एवं खाद्य सुरक्षा के प्रति सचेत रहना चाहिए। खाद्य सेवा ऑपरेटरों को भी यह स्पष्ट कहा जाना चाहिए कि ऐसे कर्मचारियों के बावजूद, उनके पास चलाने के लिए एक अच्छा व्यवसाय है, जिसकी उन्नति के लिए कर्मचारियों की व्यक्तिगत स्वच्छता एवं खाद्य सुरक्षा बहुत जरुरी है। खाद्य सेवा प्रदाताओं के पास जब पर्याप्त कर्मचारी नहीं होते हैं, तो खाद्य सुरक्षा, स्वच्छता और ग्राहक सेवा को ही सबसे ज्यादा झेलना पड़ता है। बहुत से रेस्तरां मालिकों के लिए किसी एक टूटे हुए हैन्ड सिंक की मरम्मती करने से ज्यादा अपने कर्मचारियों को खाद्य सुरक्षा का प्रशिक्षण दिलाना बहुत खर्चीला लगता है। खाद्य सेवा प्रदाताओं को स्वच्छता एवं खाद्य सुरक्षा जैसा अहम मुद्दा बेकार लगता है और वे इस

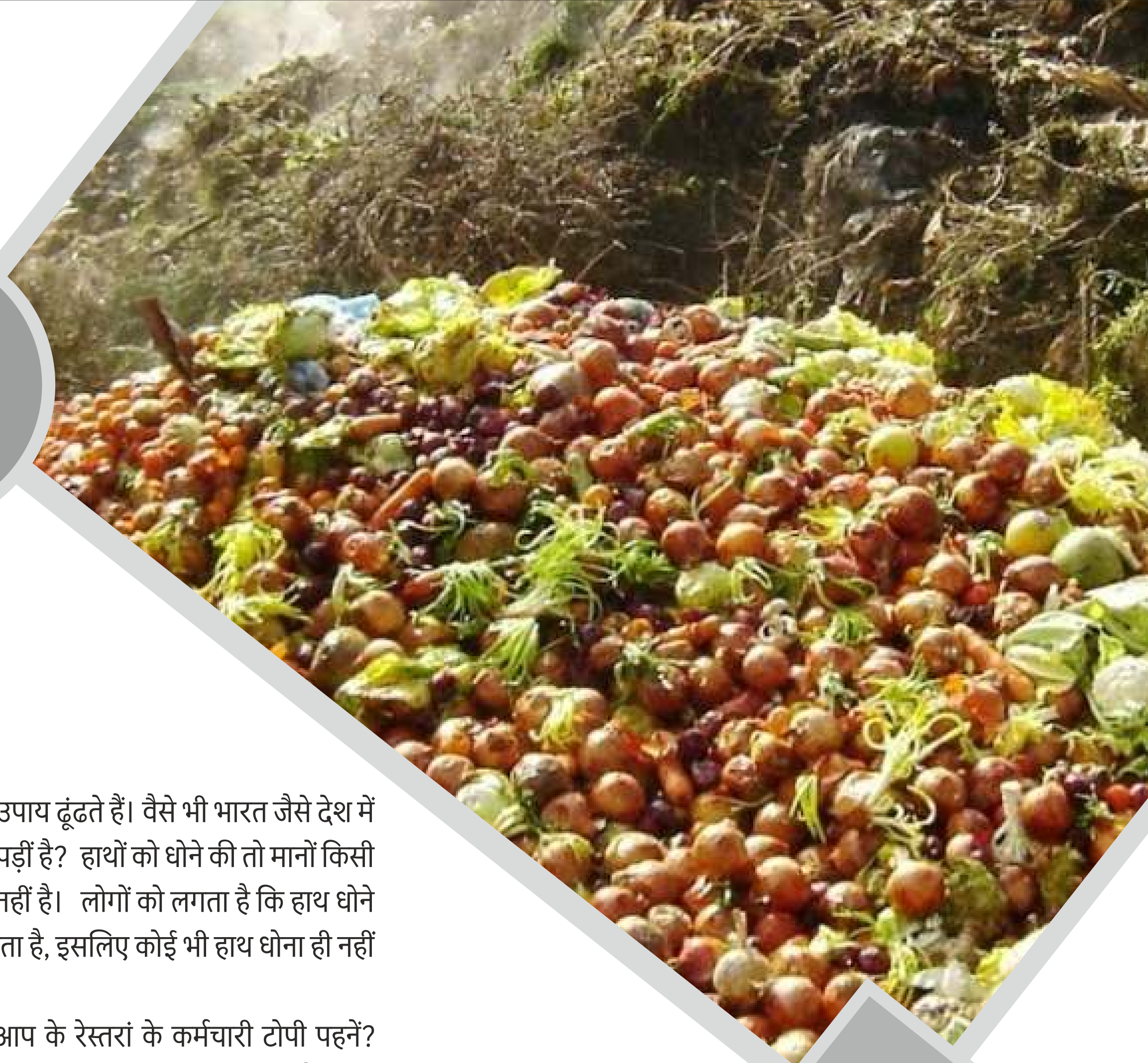

अनचाहे खर्चे से बचने के उपाय ढूंढते हैं। वैसे भी भारत जैसे देश में किसको इसकी जरूरत पड़ीं है? हाथों को धोने की तो मानों किसी को भी बिलकुल जरुरत नहीं है। लोगों को लगता है कि हाथ धोने में बहुत ज्यादा समय लगता है, इसलिए कोई भी हाथ धोना ही नहीं चाहता है।

क्या आप चाहते हैं कि आप के रेस्तरां के कर्मचारी टोपी पहनें? परन्तु, क्या आप ने इस मुद्दे पर कभी गंभीरता से सोचा है? यदि नहीं सोचा है, तो अब तक क्यों नहीं सोचा और क्रियान्वयन किया है? क्या कर्मचारियों के सिर पर बाल नहीं है? क्या आप के रेस्तरां-कर्मियों के अलावा किसी और को भी मालूम है कि भोजन की तैयारी के दौरान पसीना टपकना एक बड़ी समस्या है। बेशक, ये परिदृश्य सिर्फ परिदृश्य नहीं हैं, एक सच्चाई है। फिर भी यदि आपको नहीं लगता है कि कर्मचारी-वर्ग खुदरा खाद्य उद्योग में एक बड़ी तस्वीर है और इस उद्योग की वास्तविकता का बड़ा हिस्सा हैं, तो आप गलत हैं। उचित स्वच्छता प्रथाओं का जो भी सबसे अच्छा अभ्यास हो, यदि कर्मचारी अपने प्रबंधन से सहमत नहीं हैं और अपने तरीके से ही काम करते हैं, तो क्या उनका उक्त अवांछनीय आचरण प्रबंधन को स्वीकार्य है? ऐसी परिस्थिति में कर्मचारियों को लगता है कि प्रबधन को उनके ऐसे व्यवहार से कोई परेशानी नहीं है और फिर वे उसी निरंकुशता से ही काम करते रहते हैं। इस प्रकार से खाद्य सुरक्षा की लापरवाही का एक दुष्चक्र विकसित हो जाता है जो लगातार जारी रहता है। इसलिए, प्रबंधन को चाहिए कि ऐसे कर्मचारियों से अविलम्ब निजात प्राप्त कर लें और उनकी छुट्टी कर दें।

रेस्तरां, ढाबों और सडकों के किनारे खान-पान की रेहड़ियों पर स्वास्थ्य के हितों एवं खाद्य सुरक्षा के नियमों के उल्लंघन की कोचिंग के हरेक मामले में खाद्य ऑपरेटरों को प्रशिक्षित करना, निर्देशित करना और जोखिमों को पूरी तरह से समझाया जाना चाहिए। अगर कर्मचारियों को समझ में नहीं आ रहा है और वे ठीक से प्रशिक्षित नहीं हुए हैं, तो जवाबदेही किसकी होनी चाहिये? जाहिर है, प्रबंधन के साथ-साथ कर्मचारियों पर भी यह जिम्मेदारी बराबर की होती है। यदि कर्मचारी ठीक तरह से सीख नहीं रहे हैं अथवा प्रशिक्षण में कोई कमी रह गई है, तो उन्हें प्रबंधन को उक्त मामला बताना चाहिए। नहीं तो, यह उन की नालायकी एवं बेईमानी है। ध्यान रखें कि 'प्रबंधन ने यदि कर्मचारी को कुछ करने को कहा है' और

उस के बाद भी वह उस पर अमल नहीं करता है तो यह सरासर गलत है। यही वजह है कि खाद्य सुरक्षा के नियमों के उल्लंघन से होने वाली बीमारियां, जीवन को जोखिम में डालने वाले संभावित लक्षण, आर्थिक दायित्व, प्रतिष्ठा-क्षति, वित्तीय हानि और रोजगार की कमी इन का मूल कारण है। इन कारणों को एक निश्चितता के साथ निपटाना चाहिए, क्योंकि कभी-कभी गैर-अनुपालन एवं नाफ़र्मनी और नुकसान की मात्रा इतनी बढ़ जाती है कि भोजन से होने वाले संक्रमण को रोका ही नहीं जा सकता है।

हरेक व्यक्ति खाद्य सुरक्षा अधिनियम तथा दूषित खाने-पीने से होने वाली बीमारियों के बारे में ही बात करता है, लेकिन उद्योग को तबदीली के लिए क्या करना चाहिए? इस मुद्दे पर कोई भी व्यक्ति कुछ नहीं कहता है। उद्योग को सबसे पहले अपने कार्यक्षेत्र का निरीक्षण, कर्मचारियों का प्रशिक्षण और अपने कोष में सुधार करना चाहिए। माना कि समाधान का हिस्सा जटिल है, पर यह इतना भी असंभव नहीं है। जाहिर है, जरूरत फिर से खाद्य सुरक्षा के बुनियादी सिद्धांतों पर चर्चा करने की है । इन बुनियादी सिद्धांतों में अच्छी तरह से हाथ धोने और व्यक्तिगत स्वच्छता के नियम सर्वोपरी हैं। मानो या न मानो, देश में बहुत से खाद्य व्यवसायी ऐसे भी हैं जो हाथ धोने की प्रक्रिया को समझने में असमर्थ हैं, कुछ ऐसे लोग भी हैं जो इस मुद्दे पर कम ध्यान देते हैं और कुछ लोग ऐसी परिस्थितियों से आते हैं जो उपयुक्त हाथ धोने को लागू करने के लिए अनुकूल ही नहीं हैं। स्वच्छता के बुनियादी ढांचे की कमी वाले हमारे देश में आधुनिक स्वच्छता सीखने की ट्रेनिंग भी शायद सबसे अच्छी नहीं हैं। खाद्य ऑपरेटरों को उनके शुरुआती प्रशिक्षण के दौरान, इससे पहले कि वे कुछ भी स्पर्श करें, यह सिखाया जाना चाहिए कि वे अपने हाथों को कैसे धोएं। अपने हाथों को धोने के लिए उनको पहले दिन से ही इसका अभ्यास करवाना चाहिए। बुनियादी तौर पर यह बिलकुल सही लगता है। परन्तु, असल में ऐसा नहीं है, क्योंकि आज भी देश में संचरित रोगों का 80 प्रतिशत केवल स्पर्श के द्वारा ही स्थानांतरित किया जा रहा है।

अत: हाथ धोने का अभ्यास सभी खाद्य संचालकों के लिए जरुरी किया जाना चाहिए। इसे समझदारी से लागू किया जाना और उचित तरीके से हाथ धोना कंपनी की नीति होनी चाहिए। स्वास्थ्य विभाग की ओर भी से निर्देश होने चाहिए कि अनुचित प्रकार से हाथ धोना एक 'महत्वपूर्ण' और 'प्राथमिक' खाद्य सुरक्षा का उल्लंघन है।

जब कभी हम किसी पेट की बीमारी और डायरिया आदि से पीड़ित होते हैं तो प्राय: उसका मुख्य कारण घर के बाहर खाए गए विषाक्त भोजन को ही मानते है। हालांकि, यदि घर में भी सफाई न हो तो वहां भी बीमारियों के कीटाणु पनप सकते हैं और घरों की रसोईयों की खराब स्वच्छता की वजह से वहां भी विषाक्त भोजन मिल सकता है। वास्तव में, बीमारियों के कीटाणुओं के पनपने का मुख्य कारण गन्दगी एवं अस्वच्छता ही होती है। कच्चे फलों तथा सब्जियों के अलावा कच्चे मांस, अंडों, मछली और समुद्री भोजन सहित कई प्रकार के कच्चे खाद्य पदार्थों से रोग फैलाने वाले कीटाणु एवं रोगाणु खाना पकाते समय भोजन में स्थानांतरित हो कर भोजन को विषाक्त कर देते हैं। सफाई न हो तो रोगाणु रसोई की सतहों से या भोजन पकाने वाले बर्तनों से भी भोजन में प्रवेश कर सकते हैं। इस के अलावा, यदि भोजन को गंदे एवं संक्रमित हाथों से भी पकाया जाए तो भोजन संदूषित हो सकता है। परन्तु, इन स्वास्थ्य जोखिमों को आसानी से रोका जा सकता है।

जब किसी व्यक्ति के गंदे हाथों या रसोई के बर्तनों से हानिकारक रोगाणु गलती से भोजन पकाते समय अन्य खाद्य पदार्थों में क्रॉस-कंटामिनेशन अर्थात साफ़-सुथरे भोजन में चले जाते हैं तो भोजन अनजाने में ही संदूषित हो जाता है। भोजन पकाने वाले व्यक्ति को मांस एवं अंडों जैसे कच्चे खाद्य भोज्य-पदार्थों को छूने से पहले तथा बाद में और डिब्बों की हैंडलिंग के तुरंत बाद, पालतू पशुओं को छूने या शौचालय का प्रयोग करने के बाद सदैव साबुन तथा साफ पानी से अपने हाथ धोने चाहिए। डेटॉल का लिक्विड साबुन क्रॉस-कंटामिनेशन को रोकने का एक शानदार तरीका है। रेस्तरां-कर्मियों को खाना बनाने के तुरंत बाद रसोई के फर्श सहित सभी सतहों को साफ और रोगाणुरहित करना चाहिए, रोगाणुओं को रोकने के लिए खाद्य पदार्थ को ढककर या उनको सीलबंद कंटेनरों में रखना चाहिए, कच्चे खाद्य पदार्थ को पकाए हुए खाने के लिए तैयार भोजन से दूर रखना चाहिए, किसी भी पालतू जानवर को भोजन तैयार करने और खाना परोसने के क्षेत्रों से दूर रखना चाहिए तथा रसोई, बर्तनों आदि को स्वच्छ रखना चाहिए।

कुछ संक्रमण फ़ैलाने वाले वायरल रोगाणु और जीवाणु फ़ूड-चेन में पुन: संचारित हो रहे हैं। दूषित भोजन और उस भोजन को बनाने वाले कर्मचारी-वर्ग के बीच इस बात को लेकर भारी दबाव है। कोई भी खाद्य सुरक्षा व्यवसायी ऐसे कर्मचारियों को बर्दास्त नहीं करेगा और उनको

बदलना चाहेगा जिनमें इस तरह के लक्षण हैं। दुर्भाग्य से, कुछ संगठनों के लिए खाद्यजनित बीमारी फैलाने का दुःस्वप्न एक वास्तविकता बन गया है। याद रहे, दूषित हाथों से भोजन को छूने से भोजनजन्य बीमारी फैलती है, भोजन तैयार करने से पहले केवल 20 प्रतिशत लोग ही अपने हाथों को धोते हैं, शौचालय अथवा वाशरूम में जाने के बाद केवल 75 प्रतिशत से कम महिलाएं और मात्र 50 प्रतिशत पुरुष ही हाथ धोते हैं, जब भी प्रत्येक बार शौचालय को ढक्कन के साथ फ्लश किया जाता है तो एस्चेरिशिया कोली और स्टैफिलोकोकस जैसे बैक्टीरिया 6 वर्ग मीटर के क्षेत्र में फैल जाते हैं। सार्वजनिक बाथरूम में सिंक के आसपास के क्षेत्र में भी 90 प्रतिशत ऐसे बैक्टीरिया आते हैं। ज्ञात हो, हाथ धोने में प्रत्येक बार 15 सेकंड लगते हैं जिससे 10 गुना अधिक बैक्टीरिया हटाए जा सकते हैं। हमारे हाथों पर अधिकांश बैक्टीरिया उंगलियों पर और नाखूनों के नीचे विद्यमान होते हैं जबकि, अधिकांश लोग अपने हाथों की हथेलियां धोते हैं और शेष हाथ का कुछ भी याद नहीं रखतें हैं। बैक्टीरिया की संख्या हाथ पर ही सबसे ज्यादा मिलती है, फिर भी दायें हाथ वाले लोग अपने दाहिने हाथ की तुलना में अपने बाएं हाथ को अच्छी तरह धोते हैं और बाएं हाथ वाले इसके विपरीत। हाथ धोने के बाद केवल 20 प्रतिशत लोग अपने हाथों को सुखाते हैं। याद रहे, फिर से प्रयोग करने योग्य कपड़े व तौलिए लाखों बैक्टीरिया को आश्रय देते हैं। डिस्पोजेबल कागज़ के तौलिए हाथों को सुखाने का सबसे अच्छा स्वच्छता का साधन हैं। हाथ धोने और हाथ की स्वच्छता की पहल से बहुत अधिक अनुपस्थितियां, रोग-अवकाश और खोई हुई उत्पादकता कम हो जाती है। खोजकर्ताओं ने पाया है कि बीमारियां फैलाने में छछूंदरों, चूहों, तिलचट्टों, मक्खियों और मच्छरों का बहुत बड़ा हाथ होता है। लोग साफ-सफाई में लापरवाही बरतकर अकसर संक्रामक बीमारियों को न्योता देते हैं।

भोजन संचालकों के लिए उचित दस्ताने का प्रयोग भी आवश्यक है। दस्ताने त्वचा की तरह हैं और जब भी वे दूषित या ख़राब हो जाते हैं, तब उन्हें अवश्य बदलना चाहिए। जब दस्ताने बदले जाते हैं तो हाथों को भी सही ढंग से धोया जाना चाहिए। खाद्य संचालक प्रायः ये बातें भूल जाते हैं कि उन्होंने अपने दस्ताने न बदल कर अपने हाथों को फिर से दूषित कर लिया है। एक अच्छा मूल उदाहरण यह है कि जब पशु से प्राप्त कच्चे प्रोटीन को प्रसंस्करण किया जाता है तो प्रसंस्करण कार्यकर्ता अपने

दस्ताने बदलता है। सैंडविच जैसे एक तैयार भोजन से जुड़े कार्यों में भी प्रयुक्त दस्ताने को ठीक से निकालने की ज़रूरत है और उनको संभावित भौतिक संदूषकों के रूप में समाप्त नहीं होना चाहिए। सर्वाधिक समय, दस्तानों को हटाना अपरिहार्य हैं। जब खाद्य सुरक्षा की बात आती है तो याद रहे निजी स्वच्छता के लिए विभिन्न प्रकार के प्रोटोकॉल हैं जिनमें न केवल हाथ धोना और दस्ताने का प्रयोग सम्मलित हैं, बल्कि खाद्य सुरक्षा के मामले में जब कर्मचारी बीमार हों, भोजन प्रबंधक अस्वस्थ हों, व्यक्तिगत भोजन एवं पेय या अन्य वस्तुओं की तैयारी कर रहे कर्मचारी अपने बालों पर अंकुश नहीं रख पा रहें हों और वे गंदे कपड़े पहनते हों, तो ये सभी खाद्य सुरक्षा के लिए बड़ी समस्याएं हैं।

रेस्तरां के बीमार कर्मचारियों के द्वारा भोजन बनाने का काम एक चिंता का विषय है। 'प्रमुख पाँच रोग-जनकों' जैसे माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस, स्ट्रेप्टोकोकस, स्यूडोमोनस, शिगेला, कैंबिलोबैक्टर और साल्मोनेला की समझ और प्राथमिकता भोजन-प्रबंधन के लिए ही नहीं, बल्कि जनसाधारण के लिए भी होनी चाहिए। हेपेटाइटिस-ए, ई-कोली, साल्मोनेला, शिगेला और नोरोवायरस द्वारा संक्रमण से पीड़ित कर्मचारी को भोजन का प्रबंधन नहीं करना चाहिए और काम पर लौटने से पहले चिकित्सक द्वारा चिकित्सकीय दोषमुक्त होने का प्रमाण-पत्र लेना चाहिए। नोरोवायरस इस सूची में सबसे उपर है। अमेरीका के रोग नियंत्रण और रोकथाम के केंद्र बतातें हैं कि भोजन संबंधी सभी बीमारियां में से ५० प्रतिशत नोरोवायरस के कारण ही होती हैं। कई मामलों में तो बीमार हुए कई खाना प्रबन्धक ही विषाणु फैलाने में लिप्त मिले थे। अत: यह सुनिश्चित करें कि आप उक्त जानकारी को अन्य लोगों में साझा करेंगे और साथ में, यह भी समझ लें कि व्यक्तिगत स्वच्छता का मुद्दा स्वास्थ्य विभाग की ही संभावित प्राथमिकता नहीं है, बल्कि यह हम सब की है क्योंकि व्यक्तिगत स्वच्छता की उल्लंघना एक विकट समस्या है।

भोजन बनाने वाले कर्मचारियों को निम्नलिखित बातों पर भी गौर करना चाहिए: उन्हें दैनिक स्नान करने, स्वच्छ कपडे पहननें, अपने नाखूनों को साफ और सुव्यवस्थित रखने और किसी भी खुले घाव को ठीक से कवर करने की बाध्यता होनी चाहिए। याद रहे, उन्हें अपने अत्यधिक मुंहासे वाले चेहरे, किसी बड़ी फुंसी या मवादयुक्त फोड़े के बारे में मत भूलना चाहिए क्योंकि ये स्टेफिलोकोकल स्टेफ संक्रमण के रूप में भोजन की विषाक्तता के संभावित स्रोत हैं। भोजन संचालकों को 'वह सामान बिखरा पड़ा है, अथवा अस्त-व्यस्त है और हाथ-मुंह धोने का कमरा कैसा दिखता है', आदि बातों को भूल कर इस बात पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए कि आप का कर्मचारी कैसे दिखता है। उन्हें उस बात पर ही गौर करना चाहिए, क्योंकि खुदरा खाद्य उद्योग में स्वच्छता का अनुपालन करना सबसे जरुरी है। खाद्य पदार्थों की तैयारी एवं भोजन के लिए आरक्षित क्षेत्रों में बालों की रोकथाम करने की नितांत आवश्यकता होती है। अत: फ़ूड इंडस्ट्री के कर्मचारियों को माथे की लट, लम्बी बालों की चोटी और दाढ़ी इत्यादि को ढककर तथा बांध कर रखना चाहिए। बर्तनों के ढक्कन को ठीक से संग्रहीत किया जाना चाहिए, उनको भोजन तैयार करने के धरातल के ऊपर नहीं रखना चाहिए। चूंकि बाल भोजन में नंबर एक भौतिक एवं जिस्मानी जोखिम होते हैं, इसलिए इनके लिए उचित सावधानी बरतने चाहिए क्योंकि बाल भोजन में एक अप्रत्याशित घटक नहीं होना चाहिए। खाद्य प्रसंस्करण एवं भोजन बनाने के क्षेत्रों में खाने और शराब पीने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। न केवल यह गंदा है, यह असभ्य भी है, खासकर अगर यह ग्राहकों के सामने किया जाता है तो। कॉकटेल प्रस्तुत करते समय भोजनशाला का कोई नौकर या एक बारटेंडर अपने मुंह में पिज्जा, पास्ता या सलाद लिये हुए हो तो उनके ये कृत्य संस्थान को बंद करने के लिए पर्याप्त हैं। इसी तरह खाना पकाने के क्षेत्रों में चबाने वाली गम और थूकना मना है। अनचाहा एवं अवांछित उड़ने वाला थूक इसके दुष्परिणाम हैं।

इन दिनों सोशल मीडिया किसी भी लापरवाही एवं उपेक्षापूर्ण व्यक्तिगत स्वच्छता या हाथ धोने की क्रिया को एक संभावित वायरल सनसनी बना सकती है। सेलफोन से कुछ भोजन बनाने एवं उसको संभालने वालों द्वारा कुछ गन्दा, अतिमलिन या साख और प्रतिष्ठा के लिए अहितकर छापने योग्य न्यूज़वर्थी घटना के फूटेज को वायरल करके अपने कर्मचारियों को विशेष रूप से एक नए कर्मचारी के सामने दिखायें और उन्हें याद दिलाएं कि वे ग्राहकों के सामने मंच पर हैं, यहां तक कि रसोई में भी। इससे कर्मचारी खाध्य-सुरक्षा के प्रति ज्यादा सचेत होंगे और अच्छा एवं स्वास्थ्यवर्धक भोजन बनाने से लेकर उसको परोसने का काम ठीक से करेंगे।

खाद्य सुरक्षा के बुनियादी सिद्धांतों की वापसी के लिए हाथ धोने की आदत और व्यक्तिगत निजी स्वच्छता को निष्पादित करना खुदरा खाद्य सेवा के कार्यों में हर समय अपनाया जाना चाहिए। यदि एक दफ़ा यह व्यवहार फिसल जाता है, तो यह नासूर बन सकता है और दूसरों को भी प्रभावित करता है। याद रखें, खाद्य संचालक एवं प्रबंधनकर्ता इस जानकारी को कैसे प्रस्तुत करें। इस जानकारी को बस एक महत्वपूर्ण संदेश के रूप प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इसे व्यवहारकुशल तरीके और व्यवहारिक स्तर पर पेश किया जाना चाहिए ताकि इसको अविलंबिता और तात्कालिकता की भावना के साथ हर कोई समझ सके। ऐसा करने से आप अपने खाद्य सेवा प्रतिष्ठान को संभावित स्व-प्रवृत्त दुःस्वप्न से बचा सकते हैं।

Dr. Paras Gupta
MOBILITY IS LIFE

अति-आधुनिक ओर्थोपेडिक
एवं जोड रोग केन्द्र
अब कुरुक्षेत्र में

घुटने व कूल्हे का प्रत्यारोपण
घुटने व कंधे का दूरबीन से इलाज
बिना चीर फाड़ के जोड़ों का आपरेशन
फ्रैक्चर का रोड व प्लेट से उपचार

डा. पारस गुप्ता
MCh. ओर्थो इंगलैंड, DNB ओर्थो
घुटना प्रत्यारोपण फ़ेलोशिप, इंगलैंड
आर्थरोस्कोपी फ़ेलोशिप, नई दिल्ली
पूर्व वरिष्ठ रेसीडेंट, ऐम्स हस्पताल, नई दिल्ली
हड्डी एवं जोड़ रोग विशेषज्ञ

आशीर्वाद
नर्सिंग होम

9 / सेक्टर -7, पिपली रोड, कुरुक्षेत्र अपॉइंटमेंट के लिए काल करें- 8222811122

भारत भर में सिंचाई जल का समुचित प्रबंध न होने से भी बिगड़ रहा है पर्यावरण

भारत एक विकासशील देश है जिसकी अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि पर निर्भर है। उन्नत कृषि के लिये उपजाऊ जमीन और समुचित जल प्रबन्ध का होना नितान्त आवश्यक है। परन्तु हमारे देश में समुचित जल-प्रबन्ध है ही नहीं क्योंकि यहां वर्षा मानसून पर निर्भर है और हमारी अधिकांश कृषि को इस वर्षा पर निर्भर रहना पड़ता है। वैसे भी देश में 80 प्रतिशत वर्षा मध्य जून से मध्य अक्तूबर के बीच में ही हो जाती है। कई बार तो मानसून कमजोर रह जाती है जिसका प्रभाव वर्षा पर पड़ता है। इसीलिए भारत में मानसून की वर्षा अनिश्चित, अनियमित और असमान होती है। परिणामस्वरूप यदि अच्छी खेती करनी है तो इसके लिए फसलों की सिंचाई करना बहुत आवश्यक है। शुष्क एवं अपर्याप्त वर्षा वाले क्षेत्रों में तो जल का समुचित प्रबन्ध करना और भी ज्यादा जरूरी होता है तथा उसको सिंचाई के माध्यम से ही पूरा किया जा सकता है। हालांकि सिंचाई व्यवस्था देश में पानी की उपलब्धता को देखकर ही कायम की जाती है।

भारत में खेतों की सिंचाई वर्षा, नदी और भू-जल से प्राप्त जल से की जाती है। 'नलकूप' अब भूमि से जल निकासी का एक आम साधन है जबकि वर्षा या हिम जल को नदियों व नहरों द्वारा वांछित सिंचाई क्षेत्रों तक पहुंचाया जाता है। अधिकांश नहरें नदियों से ही जल की आपूर्ति करती हैं। बड़ी नहरों से छोटी नहरें (शाखायें), रजवाहे, माइनर तथा खालों का क्रमबद्ध निर्माण करने के बाद किसानों के खेतों को सिंचित करने की प्रथा आज भी देश के विभिन्न भागों में बहुतायत में प्रचलित है। नहर से जुड़ी इस पूरी व्यवस्था को 'नहर प्रणाली' (कैनाल नेटवर्क) नाम दिया गया है। इस नहर प्रणाली को तीन भागों में क्रमबद्ध किया जा सकता है जैसे मुख्य नहर व शाखायें, रजवाहे व माइनर एवं खाले तथा सिंचाई-क्षेत्र।

जब फसलों को सिंचित करने के लिए पानी को जमीन पर बाढ़ के पानी की तरह बहाया जाता है तो उसे **'भूतल सिंचाई'** या **'फ्लड इरिगेशन'** कहते हैं। सिंचाई के इस माध्यम से जल वितरण प्रायः अनियंत्रित और अप्रभावी रहता है परन्तु हजारों वर्षों से दुनिया भर में फसलों की सिंचाई करने के लिए यही सर्वाधिक लोकप्रिय और सामान्य तरीका आज भी प्रयोग में लाया जा रहा है। **'ड्रिप सिंचाई'** जिसे ट्रिकल सिंचाई, सूक्ष्म सिंचाई अथवा स्थानीय सिंचाई भी कहते हैं, सिंचाई की एक ऐसी विधि है जिससे पानी एवं उर्वरकों की बहुत बचत होती है। इस विधि से पौधों की जड़ों को ड्रिप करने के लिए वाल्वों, पाईपों और फव्वारों के द्वारा या तो मिट्टी की सतह पर अथवा सीधे जड़ों पर धीरे-धीरे पानी पहुंचाया जाता है। पानी की पाईपें जल संयंत्र से सीधे ही पौधों तक पानी पहुंचाती हैं।

सिंचाई की **लिफ्ट सिंचाई परियोजना** उन क्षेत्रों के लिए प्रयोग में लाई जाती है जहां सिंचित किए जाने वाला कमांड क्षेत्र काफी ऊंचा होता है तथा पानी को वहां पर निचले स्तर से लिफ्ट करके पंपों एवं अन्य उपकरणों के द्वारा पहुंचा कर बाद में किसानों में वितरित किया जाता है। नाबार्ड ने भारत में लगभग 1400 लिफ्ट सिंचाई परियोजनाओं के लिए लगभग 700 करोड़ रूपये का ऋण उपलब्ध करवाया हुआ है।

ज्वार सिंचाई तटीय क्षेत्रों में उन नदियों के पानी से की जाती है जिनका बहाव एवं मुहाना बहुत बड़ा होता है और उनमें ज्वार के प्रभाव से जब बहुत पानी वापिस आता है तो नदी के तेज बहाव के कारण नदी के पानी से ही तटीय क्षेत्रों में सिंचाई हो जाती है जबकि नमक का पानी सिंचाई में नहीं आ पाता है। सिंचाई का यह माध्यम तटीय इलाकों के अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में नहरें खोदने से संभव हो पाता है।

एक जलाश्य या डैम सिंचाई में जलाश्य को सामान्यतः एक बड़ी ऊंचाई पर बनाया जाता है तथा किसी नहर के चैनल को जब उस बड़े जलाश्य से जोड़ देते हैं तो पानी स्वतः ही नहरों, उनकी शाखाओं और उप-शाखाओं में बह कर भूमि की सिंचाई को पूरा करता है। नहरों का जल स्तर सिंचित क्षेत्रों की तुलना में अधिक होता है। नहरों एवं चैनलों से की गई इस तरह की सिंचाई को बहाव सिंचाई भी कहते हैं। इस तरह की सिंचाई मैदानी एवं समतल क्षेत्रों में संभव होती है। **नहरों से सिंचाई करना** सबसे आसान तरीका है। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश में कुल सिंचित क्षेत्रफल में से लगभग आधे क्षेत्र की नहरों से ही सिंचाई की जाती है। इन राज्यों में जमीन लगभग समतल और मिट्टी नरम होने के कारण नहरों की खुदाई करना आसान है।

नहरें दो प्रकार की होती हैं, एक तो बारहमासी नहरें तथा दूसरी सैलाब वाली नहरें अर्थात् बाढ़ के पानी से बनी हुई नहरें। पंजाब में **'अपर बड़ी दोआब कैनाल'**, **'सरहिंद कैनाल'**, हरियाणा में **'पश्चिमी यमुना कैनाल'** तथा **'चक्र कैनाल'** आदि नहरें हैं। चक्र कैनाल देश की सबसे बड़ी नहर है जो पंजाब एवं हरियाणा के एक बड़े भूभाग की सिंचाई करती है। राजस्थान में

'राजस्थान कैनाल' जिसे इंदिरा गांधी कैनाल के नाम से भी जाना जाता है, एशिया भर में सबसे बड़ी कैनाल है। इससे राजस्थान के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में सिंचाई की जाती है। उत्तर प्रदेश में **'बेता कैनाल'**, **'अपर गंगा नहर** एवं **लोअर गंगा कैनाल'** प्रमुख नहरें हैं। आंध्र प्रदेश में कृष्णा, गोदावरी और तुंगभद्रा नदियों से भी अनेक नहरें निकाली गई हैं। देश की अन्य प्रमुख नहरों में बिहार में **'सोन कैनाल'**, पश्चिमी बंगाल में **'दामोदर कैनाल'**, उड़ीसा में 'महानदी' और 'ऋषि कुल्या' नहरें, तमिलनाडु में 'मैटूर' और 'पैरियार' नहरें तथा कर्नाटक की 'कृष्णा राजनगर', 'तुंगभद्रा' एवं 'घटापर्व' नहरें प्रमुख हैं।

समतल एवं नरम जमीन वर्षा के पानी को सोखकर उसे भूजल में एकत्रित करती रहती हैं। इस पानी को स्थानीय किसान कुओं अथवा ट्यूबवैलों से सिंचाई में प्रयोग करते हैं। हालांकि आजकल भूजल का ज्यादा दोहन होने से इसका स्तर बहुत नीचे चला गया है परन्तु पश्चिमी उत्तर प्रदेश, बिहार के कुछ इलाकों दक्षिण के काली मिट्टी वाले कपास के कृषि क्षेत्र, आंध्र प्रदेश के तटीय क्षेत्र, राजस्थान, हरियाणा, गुजरात और पंजाब के कुछ इलाकों में कुंए के पानी का सिंचाई में प्रयोग होता रहा है।

संपूर्ण भारतीय प्रायद्वीप में विशेषकर पठार वाले क्षेत्रों में जलाश्यों एवं सरोवरों से सिंचाई करना बड़ी ही व्यावहारिक और व्यापक विधि है। इन्हें स्थानीय किसान एवं ग्रामीण अपनी सुविधानुसार खोदते हैं तथा वर्षा के जल से उनको भर कर उनके पानी का प्रयोग सिंचाई में करते हैं। पठार की मिट्टी कठोर एवं पथरीली होती है जहां नहरों या कुंओं से सिंचाई करना आसान नहीं है। लिहाजा पहाड़ों की घाटी के एक और एक बड़ा सा जलाश्य या सरोवर उस पर बांध बना कर बनाया जाता है जिस के पानी से नहरों के द्वारा सिंचाई की जाती है। इन बांधों वाले बड़े बड़े जलाश्यों में 'निजाम सागर', 'उस्मान सागर', 'हुसैन सागर' और 'कृष्णानगर सागर' इत्यादि प्रमुख हैं जो भारत के दक्षिणी पठार पर बने हैं परन्तु सूखे के समय ये जलाश्य भी सूख जाते हैं।

भारत में उपयोग होने वाले जल की कुल उपलब्धता लगभग 1869 घन किलोमीटर (कुल जल का 36 प्रतिशत) है। जबकि केन्द्रीय भू-जल परिषद् ने उपयोग होने वाले भू-जल का यह आंकड़ा केवल 432 घन किलोमीटर ही दर्ज किया है। इस प्रकार कुल उपलब्ध उपयोगी जल की मात्रा तकरीबन 1122 घन किलोमीटर ही बनती है। जल का उपयोग सामान्यतः तीन क्षेत्रों- घरेलू, उद्योगों एवं सिंचाई क्षेत्र में किया जाता है। जबकि भारत में इस उपलब्ध जल का लगभग 80-85 प्रतिशत प्रयोग अकेले सिंचाई क्षेत्र में ही किया जा रहा है। तात्पर्य यह है कि यहां कुल उपलब्ध जल का ज्यादा प्रयोग सिंचाई या इससे सम्बन्धित कार्यों में ही होता है।

भारत में अनुमानित सिंचित क्षेत्र 1951 में मात्र 22.6 मिलियन हैक्टेयर था जो 1995-96 तक तकरीबन 90.0 मिलियन हैक्टेयर हो चुका था। सरकार ने फिलहाल सिंचित क्षेत्र का लक्ष्य लगभग 139.5 मिलियन हैक्टेयर करना तय किया है। सिंचाई-क्षेत्र में इतने विस्तार और विकास का उदाहरण मुश्किल से ही विश्व के किसी अन्य देश में देखने को मिलेगा। जहां तक उत्पादकता का प्रश्न है आज देश में सिंचित क्षेत्र से औसतन 2.5 टन प्रति हैक्टेयर अनाज का उत्पादन हो रहा है, जबकि वर्षा पर आधारित क्षेत्रों में बोई गई फसलें 0.5 टन प्रति हैक्टेयर से भी कम उपज देती हैं। सिंचित क्षेत्रों में हुई वृद्धि से ही देश में खाद्यान्नों की उत्पादकता बढ़ी है जिसके चलते हमारे खाद्यान्न-भण्डार अन्न से भरे हुए हैं और आज हम खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हैं। इस उपलब्धि में सिंचाई का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

फसलों की सिंचाई करने के लिए 'सिंचाई-जल' को एक पूर्व चयनित व्यवस्था के तहत 'नहर-प्रणाली' द्वारा किसानों के खेतों तक पहुंचाया जाता है। उत्तरी और मध्य भारत के अधिकांश प्रांतों में आज भी इसी पद्धति पर विकसित की गई 200 वर्ष पुरानी **'ब्रिटिश राज्य सिंचाई व्यवस्था'** का अनुसरण किया जा रहा है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत, मुख्य नहरों, शाखाओं, राजवाहों तथा माइनरों तक सिंचाई-जल को छोड़ने व बन्द करने का कार्य बारी-बारी से किया जाता है जिसे चक्र-कार्यक्रम (रोटेशनल प्रोग्राम) के नाम से जाना जाता है। रोटेशन प्रोग्राम इसलिए लागू किया जाता है ताकि प्राप्त सिंचाई-जल सिंचाई-क्षेत्रों को एक बार में ही सिंचाई करने के लिये पर्याप्त हो सके। अतः उपलब्ध जल का बंटवारा (राशनिंग) भी इस कार्यक्रम के द्वारा निर्धारित किया जाता है। नहरों में पानी छोड़ने के रोटेशनल प्रोग्राम को अन्तिम रूप देना सरकार के अधीन होता है जहां राज्यों के सिंचाई विभाग उसे कार्यान्वित कर सिंचाई-जल का वितरण करते हैं। किसान भाईयों को इसकी जानकारी 6 माह पूर्व दे दी जाती है।

यह कार्यक्रम पूर्णरूप से निश्चित होता है तथा आमतौर पर इसमें बदलाव नहीं किया जाता है।

'रजवाहों' और 'माइनरों' से प्राप्त सिंचाई-जल को एक निश्चित आकार का निर्माण कर के बनाए गए खालों में छोड़ा जाता है। इस निर्माण को 'मोगा' कहते हैं। यह 'मोगा' एक निश्चित अवधि में निश्चित 'सिंचाई-जल की मात्रा' ही खालों में प्रेषित कर सकता है। 'मोगा' अपने निश्चित आकार के कारण निश्चित क्षेत्र को ही सिंचित करने की क्षमता रखता है। इस निश्चित क्षेत्र को 'मोगा क्षेत्र' (मोगा-चक) की संज्ञा दी जाती है।

सभी राजवाहों व माइनरों में आठ दिन लगातार पानी प्रवाहित किया जाता है, ताकि उनमें लगे सभी मोगे कम से कम 7 दिन (168 घण्टे) तक अपने क्षेत्र को लगातार सिंचाई-जल दे सकें। खालों से पानी का बंटवारा किसान व रकबे के अनुपात में किया जाता है। सप्ताह में उसके रकबे का कुल समय निश्चित होता है। इस प्रकार उपलब्ध सिंचाई-जल बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक किसान को बांट दिया जाता है। भारत के उत्तरी राज्यों विशेषतः उत्तर प्रदेश, हरियाणा व पंजाब तथा पूर्वी पाकिस्तान में यह व्यवस्था काफी सराहनीय रही है।

अब बात करते हैं नहरों द्वारा पानी के रिसाव से पर्यावरण प्रदूषण की। सिंचाई-जल का वितरण जब उक्त व्यवस्था के तहत किसानों के खेतों तक पहुंचता है तो सम्पूर्ण 'नहर-प्रणाली' से पानी का रिसाव होता रहता है। यदि इस रिसाव को कम करने के साधन न अपनाये जाएं तो पानी का रिसाव बहुत ज्यादा हो सकता है। गहन अध्ययन करने के पश्चात देखा गया है कि औसतन 71 प्रतिशत तक सिंचाई-जल रिसाव के द्वारा जमीन के नीचे चला जाता है। प्रयोगात्मक रूप से अनुभव किया गया है कि प्रथम तथा द्वितीय भागों में रिसाव अवरोधक तकनीक यानि नहरों को पक्का अर्थात् लाइन्ड करने के बावजूद भी 50-54 प्रतिशत सिंचाई-जल रिसाव द्वारा व्यर्थ ही जाता रहता है।

सिंचाई-जल के समुचित प्रबन्धन के अभाव में यह रिसाव उन सभी कृषि क्षेत्रों में निरन्तर जारी है जहां पर सिंचाई का प्रसार व विकास हो चुका है। 'हरित-क्रान्ति' के दौरान उन्नत बीजों एवं रसायनिक खादों का प्रचुर मात्रा में उपयोग हुआ। इसी दौरान सिंचाई क्रम व उसकी मात्रा में बढ़ोतरी हुई है। फलस्वरूप, रिसाव की गति एवं उसकी दर चरम सीमा तक पहुंच गयी है। ऐसे क्षेत्र जहां कृषि भूमि कुछ रेतीली है तथा भूमि जल निकास सन्तोषजनक नहीं है, वहां तो स्थिति अति खराब और बदतर हो चुकी है।

सिंचाई क्षेत्रों में होने वाला रिसाव धीरे-धीरे जमीन की निचली सतह को पार

करता हुआ भू-जल का हिस्सा बन जाता है। दुर्भाग्य से यदि ऐसे सिंचाई-क्षेत्रों की भू-जल की गुणवत्ता ठीक न हो और उसका उपयोग फसल आदि की सिंचाई के लिये बाधित हो तो यह रिसाव वहां के भू-जल को ऊपर की ओर बढ़ाने में मददगार सिद्ध होता है। भू-जल की गुणवत्ता का ठीक न होने से हमारा तात्पर्य उस जल से है जिसमें लवणों का मिश्रण सामान्य अनुपात से अधिक होता हो। ऐसे भू-जल का स्तर जब रिसाव के कारण ऊपर की ओर बढ़ता है, तो जमीन की सतह में भी लवण की प्रतिशत मात्रा बढ़ती जाती है। सिंचाई जल के कारण बढ़ी लवणों की यह अधिकता फसलों की पैदावार के लिये बाधक ही नहीं, घातक सिद्ध हो रही है।

'रिसाव' की प्रक्रिया से जमीन में इन लवणों का असंतुलन तो बिगड़ ही रहा है, इससे प्राकृतिक पर्यावरण के दो अभिन्न अंग जल व जमीन व्यर्थ ही बर्बाद हो रहे हैं। जब जल और जमीन खराब हो जाती है तो वे शेष पर्यावरण को भी बिगाड़ देते हैं। इन दोनों अहम तत्त्वों की उपलब्धता से खाद्यान्न की पैदावार प्रभावित होती है। कृषि जगत के लिये यह अच्छा सन्देश नहीं होता है क्योंकि कृषि उत्पादकता पर यह एकदम से सीधा प्रहार है।

इतना ही नहीं, आज भारत के कुछ राज्यों में ऐसे क्षेत्र भी देखे जा सकते हैं, जहां नहरों के निरन्तर रिसाव से भू-जल स्तर जमीन के स्तर को स्पर्श कर चुका है। वहां जलाश्यों जैसी स्थिति वर्ष के बारह महीने बनी रहती है। इस स्थिति को सैलाव (वाटर लोजिंग) भी कहा जाता है। ऐसे क्षेत्रों में वन, वनस्पति व वन्य-प्राणी आदि सभी जीव-जन्तु प्रभावित होकर पर्यावरण पर अवांछनीय दबाव बढ़ा देते हैं। ऐसे जलाश्यों के आसपास विषैले जीव, कीट-पतंगें तो पनपते ही है, यहां सड़न की दुर्गंध भी पैदा होती है जिससे पर्यावरण दूषित होता रहता है। इन स्थानों पर मक्खी व मच्छर भी खूब पनपते हैं जिन से इन क्षेत्रों में मलेरिया जैसी बीमारियां हर समय अपने यौवन पर रहती हैं।

एक अनुमान के अनुसार सिंचाई व्यवस्था के इस दोषपूर्ण वितरण से हरियाणा में लगभग 11 प्रतिशत, पंजाब में 5.5 मिलियन हैक्टेयर, राजस्थान के बीकानेर और जैसलमेर का 70 प्रतिशत

कृषि क्षेत्र खराब होने की कगार पर है। इसी दोषपूर्ण व्यवस्था के चलते उत्तर प्रदेश में मथुरा, आगरा, अलीगढ़ तथा फतेहपुर आदि जिले, बिहार में मुगल सराय, मध्य प्रदेश व महाराष्ट्र के कुछ भाग, कर्नाटक, केरल व तमिलनाडु के समुद्रतटीय भाग बहुत ही प्रभावित हैं। गुजरात के कच्छ व सौराष्ट्र तथा उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के भू-भाग भी इससे अछूते नहीं हैं। राष्ट्रीय कृषि आयोग की रिपोर्ट के अनुसार देश की 7.0 मिलियन हैक्टेयर भूमि सैलाव व लवणता के कारण इन्हीं नहरी क्षेत्रों में प्रभावित है। मध्य प्रदेश, राजस्थान के चम्बल, बिहार के कोसी तथा कर्नाटक के तुंगभद्रा और आन्ध्र प्रदेश में नागार्जुन सागर क्षेत्र को ऐसे ही क्षेत्रों में देखा जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) के तहत हुए एक अध्ययन के अनुसार रिसाव से प्रभावित कृषि उपज में हुए नुकसान का यदि आकलन करें तो अकेले हरियाणा राज्य में ही 1000 करोड़ रुपये से अधिक की कृषि उपज का नुकसान वर्ष 1984 में हुआ था जो आज बढ़कर कई हजार करोड़ रूपये का हो गया है। इससे पूरे देश में होने वाले नुकसान का हम स्वयं अन्दाजा लगा सकते हैं। ज्ञात हो, रिसाव वाले क्षेत्रों में जब भूमिगत लवण जमीन की ऊपरी सतह पर आ जाते हैं तो स्थानीय भाषा में उसे 'कल्लर' या 'रेही' नाम से जाना जाता है। यह कल्लर अथवा रेही खेती के लिए बहुत घातक होती है।

विश्व की कुल खाद्य सामग्री का 40 प्रतिशत भाग सिंचाई-क्षेत्रों में ही पैदा किया जाता है। जाहिर है, कि सिंचाई के अभाव में इस उत्पादन की भरपाई भी सम्भव नहीं है। यदि भारत की ही बात करें तो सन् 2050 ई. तक यहां की जनसंख्या चीन की आबादी से भी ज्यादा हो जाएगी, ऐसी सम्भावना व्यक्त की जा रही है। तब यदि सिंचाई के समुचित प्रबन्ध न हुए तो यहां का कृषि उत्पादन आबादी की जरूरतों से बहुत कम होगा जिससे भूख, भोजन और बेकारी की समस्या उग्र रूप धारण कर लेगी। अतः सिंचाई-क्षेत्र में निरन्तर बढ़ोतरी आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य भी है। इसलिए भारत सरकार ने मौजूदा सिंचित क्षेत्र को 28 प्रतिशत से बढ़ाकर 40 प्रतिशत तक करने का लक्ष्य तय किया है। जब भविष्य में सिंचित क्षेत्र में वृद्धि होना तय एवं अनिवार्य है तो सिंचाई-क्षेत्रों में होने वाले रिसाव को कम करना ही इस समस्या का निदान है। तो आईये! रिसाव होने के कारणों को जानने का प्रयत्न करें ताकि पर्यावरण प्रदूषण से बचने के उपायों को प्राथमिकता के आधार पर लागू किया जा सके।

1. सिंचाई-जल वितरण 'नहर प्रणाली' के प्रथम तथा द्वितीय भागों को यदि पक्का (लाइन्ड) नहीं किया गया हो तो रिसाव अधिक होता है। अतः नहरों को पक्का करना जरूरी है।
2. किसान अपने खेत को यदि समतल नहीं करते हैं तो भी जल भराई में ज्यादा समय और ज्यादा जल लगता है जिससे रिसाव दर भी अधिक होती है। अतः खेतों को समतल करना बहुत जरूरी है।
3. अन्वेषणों से यह प्रमाणित हो चुका है कि अधिक पानी की खपत वाली फसलों की सिंचाई से रिसाव अधिक होता है। उदाहरण के लिये एक मीट्रिक टन गेहूं अनाज पैदा करने के लिये करीब 1000 मीट्रिक टन पानी की आवश्यकता होती है। जबकि एक मीट्रिक टन चावल पैदा करने के लिये 4000-5000 मीट्रिक टन पानी की आवश्यकता होती है। अतः फसलों का चुनाव वहां पर उपलब्ध सिंचाई के संसाधनों को ध्यान में रख कर करना चाहिए।
4. पर्यावरण के बिगड़ते हुए इस स्वरूप का निदान केवल सुदृढ़ सिंचाई प्रबन्धन से ही सुनिश्चित किया जा सकता है। 'नहर प्रणाली' के प्रथम व द्वितीय भागों द्वारा होने वाले रिसाव को 40-50 प्रतिशत तक केवल उन्हें पक्का (लाइन्ड) करके कम किया जा सकता है।
5. इसके अलावा, उपलब्ध सिंचाई-जल के कुशल उपयोग से खेत में होने वाले रिसाव को भी काफी कम किया जा सकता है। ऐसा देखा गया है कि सिंचाई-जल की कुशलता की दर भारत में अभी 40 प्रतिशत ही है, जबकि इजराइल जैसे देश में सिंचाई कुशलता 80 प्रतिशत से ऊपर ही है। सिंचाई कुशलता सुधारने के कई ढंग हैं।
6. सबसे पहले किसानों को फसलों का चुनाव भूमि की तासीर तथा वहां के मौसम व ऋतुओं को ध्यान में रखकर उन्हीं के अनुरूप करना चाहिए। नहरों के निर्माण में भी वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण करना चाहिए ताकि अधिक पैदावार देने वाली फसलों के लिये जब पानी की शिखर आवश्यकता हो, उस समय ये नहरें पर्याप्त जल सम्प्रेषित करने में सक्षम हों। कई बार देखने में आया है कि किसान पानी की अधिक खपत वाली कुछ ऐसी फसलों की बिजाई

कर लेते हैं जिससे उसी क्षेत्र के अन्तिम खेतों तक पहुंचते-पहुंचते नहरों का पानी सूख जाता है।

7. हजारों साल से सिंचाई-जल का उपयोग एक ही ढंग से हो रहा है अर्थात् एक नाके से पानी नीची सतह पर तब तक बहता रहता है, जब तक कि खेत पानी से लबालब नहीं भर जाता है। सिंचाई का यह तरीका (फलड सिंचाई) बहुत आसान व सस्ता है। परन्तु इससे रिसाव अधिक होता है और इससे पर्यावरण भी बहुत प्रभावित होता है। इस ओर कृषि एवं सिंचाई अधिकारियों को विशेष ध्यान देना पड़ेगा। उन्हें किसान भाईयों को सिंचाई-जल के उपयोग की नई-नई विधियों से निरन्तर अवगत व जागरूक कराना होगा। खेतों व लैवल कमांड एरिया को विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत सुधारना पड़ेगा। फिलहाल पुरानी पड़ चुकी 'नहर प्रणाली' के रख-रखाव में भी अधिक खर्च करना पड़ रहा है जबकि यह प्रणाली पानी की निर्धारित दरों पर नहर ढांचें को बनाए रखने में असफल सिद्ध हो रही है। अतः पुरानी पड़ चुकी नहर प्रणाली को सुधारने की जरूरत है।

8. सिंचाई तालिका (वाटर श्डयूलिंग) का ज्ञान किसान के लिए परम आवश्यक है। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि पानी की आवश्यकता फसलों के विकास में उनके विभिन्न चरणों में ही होती है। जैसे धान की खेती पर हुये अन्वेषण से सिद्ध हो चुका है कि इसकी पूरी विकास प्रक्रिया के बजाय अगर केवल बुआई व फूल आने पर ही उसकी फसल को पानी में डुबो कर रखें तो जल खपत में 27-40 प्रतिशत की बचत की जा सकती है। इसी तरह गेहूं की फसल में 6 बार पानी देने की अपेक्षा यदि केवल 3 बार ही पानी लगाया जाए तो भी 70 प्रतिशत तक पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इससे रिसाव में भी भारी कमी होगी।

9. पानी के स्वाभाविक बहाव (फलड सिंचाई) की बजाय अगर फुव्वारा व ड्रिप पद्धति का प्रयोग किया जाये तो सिंचाई की गुणवत्त 70 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। इससे रिसाव में भी भारी कमी आएगी।

10. अनुमान है कि धरती से 600 घन मीटर नमी केवल वाष्प बनने से ही उड़ जाती है। खुली धरती को यदि पत्तें, भूसा, कागज, प्लास्टिक आदि से ढक दिया जाए तो नमी के इस नुकसान को बचाया जा सकता है। इससे सिंचाई-क्रम में कमी आयेगी और रिसाव भी घटेगा।

देश के कुछ राज्यों ने इस दिशा में अच्छी पहल की है। सिंचाई व्यवस्था स्थापित करने के लिए विश्व बैंक जैसी संस्था वित्त पोषण एवं वित्तीय मदद के लिये सदैव तत्पर रहती है।

दुनिया भर में जहां-जहां भी ऐसा सुधार हुआ है उसके अच्छे परिणाम भी सामने आये हैं। हालांकि कच्ची 'नहर प्रणाली' के दोनों किनारों के साथ पहले जो जलाश्य बने होते थे और आठों पहर पर्यावरण को झकोरते थे, आज ऐसी स्थिति बहुत कम नजर आती है। फिर भी सिंचाई जल के वितरण में सकारात्मक सुधार को प्राथमिकता देना, सभी राज्यों के लिये आवश्यक है। इसके साथ-साथ सभी प्रदेशों को राष्ट्रीय जल-नीति के अनुसार ही जल का विकास, प्रबन्धन तथा उपयोग करना चाहिए।

परन्तु बड़े ही खेद एवं आश्चर्य की बात है कि इतने महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर कुछ प्रदेश आज भी ढुलमुल नीति अपनाये हुए हैं। कुछ राज्यों ने तो जल-नीति निर्धारण तो दूर, उस पर विचार करना भी आरम्भ नहीं किया है। बिहार प्रदेश ने इस बारे में एक सिंचाई आयोग एवं एक जल संसाधन आयोग का गठन करके अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है। मध्य प्रदेश ने भी 'प्रदेश जल-नीति' का मसौदा तैयार किया गया है। बाकि सभी प्रदेशों को भी इस सम्बन्ध में तुरन्त निर्णय लेना होगा ताकि सिंचाई खेती के विकास एवं विस्तार के साथ-साथ पर्यावरण को बचाने में भी सहायक हो

YAMUNA | DENSONS

Building Powerful Relationships

Heat Shrink & Cold Shrink Joints/Terminations & Accessories,
Pre-moulded Elbow Connectors, Polymeric Insulators & Vacuum Circuit Breakers.

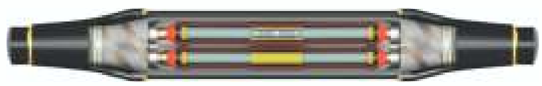

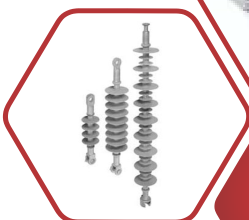

Since **1973**

35 Countries Global Presence

04 World Class Manufacturing Facilities

200 Plus Skilled Manpower

50 Internationally Approved Products

40 Plus Years Global Experience

Jointing Simplified NOW

Sardana Nagar, Ambala Road, Jagadhri, Yamuna Nagar-135 003, Haryana, INDIA.
T : +91 1732 242098, 242881 | **F :** +91 1732 242539
E : sushilgarg@yamunapower.com | **W :** www.yamunapower.com

गौरव कौशिक

आज भी कई स्थानों पर लावा उगल रही है पृथ्वी

हमारी पृथ्वी के रहस्यों में से आज भी बहुत से अनेक ऐसे रहस्य हैं जिनके विषय में या तो किसी को अब तक कोई ज्ञान ही नहीं है और बहुत से रहस्यों के बारे में पूरा ज्ञान ही नहीं है। हालांकि, संभवतः यह तो सभी को पता है कि हमारे सौरमण्डल में पृथ्वी ही एक अकेला जियोलॉजिकली एक्टिव ग्रह है जिस पर जीवन होने के साथ-साथ आज भी भूकंप और ज्वालामुखी जैसी भूगर्भीय क्रियाएं पूरी तरह से जारी हैं। पृथ्वी के क्रस्ट से निकली तरंगों के माध्यम से जब अचानक ही एक विशेष ऊर्जा का संचार होता है तो उसे **भूकंप** कहते हैं। भूकंप काफी प्रचण्ड हो सकते हैं और ये लोगों को दूर तक उछाल सकते हैं तथा किसी भी शहर को तबाह कर सकते हैं। भूकंप की यह ऊर्जा **सैस्मिक तरंगों** से प्रवाहित होती है तथा इन्हें **रिक्टर स्केल** पर **सैस्मोमीटर** से मापा जाता है। सामान्यतः 3 परिमाण की क्षमता वाले भूकंप ज्यादा घातक नहीं होते हैं जबकि 7 एवं इससे ज्यादा परिमाण वाले भूकंप धरती पर कहीं भी तबाही ला सकते हैं। जब धरती के किसी भी भूभाग से यह ऊर्जा एक विस्फोट के द्वारा बाहर निकलती है तो वहां बहुत कुछ तहस-नहस कर देती है।

पृथ्वी पर आने वाले भूकंप ज्वालामुखी से ज्यादा घातक और विनाशकारी होते हैं। यहां प्रत्येक वर्ष 10 लाख से ज्यादा भूकम्प आते हैं परन्तु न तो सबका पता चलता है और न ही सभी को रिकॉर्ड किया जाता है। सबसे विनाशकारी भूकंप सन् 1557 ई. में चीन में आया था जिसमें लगभग 8 लाख 30 हजार से ज्यादा लोग मारे गए थे। हाल ही में वर्ष 2011 में जापान के **मियागी प्रिफैक्चर** के **सेंदई** शहर में तेज गति का **टोहोकू** नामक भूकंप आया था। इस भूकंप को रिक्टर स्केल पर 9.0 तीव्रता का मापा गया था। भूकंप के बाद यहां के समुद्र में एक भयंकर सुनामी भी आई थी जिसके कारण न केवल सेंदई महानगर में भारी तबाही हुई बल्कि जापान का **फुकुशिमा डाईची आण्विक ऊर्जा संयंत्र** भी नष्ट हो गया था। अंतरराष्ट्रीय परमाणु घटना स्केल 7 की यह परमाणु आपदा सन् 1986 ई. में घटित रूस की चेरनोबिल आपदा के बाद अब तक दूसरी बड़ी आपदा थी। इस आण्विक संयंत्र से फैलने वाले रेडिएशन के कारण जापान सरकार को कम से कम 1,00,000 लोगों को संयंत्र के आसपास के क्षेत्र से हटाना पड़ा और इस संयंत्र को बंद करना पड़ा। इस भूकंप एवं सुनामी के कारण जापान में कम से कम 30 हजार से ज्यादा लोग मारे गए थे तथा इनसे यहां के उद्योगों पर भी प्रतिकूल असर पड़ा। उल्लेखनीय है कि **रिक्टर स्केल** एवं **संशोधित मरकैली इनटेंसिटी स्केल** पर भी जापान में आये इस भूकंप को वहां पर अब तक रिकॉर्ड किए गए सभी भूकंपों में सबसे बड़ा भूकंप माना गया है।

यदि किसी भूकंप का केन्द्र किसी उथले समुद्र में हो तो इससे समुद्र में इतनी हलचल हो जाती है कि वहां पर सुनामी के रूप में समुद्र की लहरें सैंकड़ों फुट तक ऊपर उठ जाती हैं और समुद्र के तटीय क्षेत्रों में भारी तबाही ला देती हैं। 'सुनामी' एक जापानी शब्द है जिसका अर्थ होता है बहुत बड़ी लहरें। आरंभ में इन्हें ज्वार-भाटा की लहरों के तौर पर अभिव्यक्त किया जाता था परन्तु मौजूदा वैज्ञानिक युग में जब ज्यादा खोजबीन हुई तो पता चला कि इनका ज्वारीय लहरों से कोई ताल्लुक नहीं है। सुनामी की लहरें ज्वारीय लहरों की अपेक्षा बहुत बड़ी और लम्बे समय तक रहती हैं। ये लहरें तटों एवं बंदरगाहों तक ही सीमित नहीं रहती हैं बल्कि जब सुनामी की लहरें बड़े वेग से आती हैं तो तटों से आगे निकल कर जमीनी क्षेत्र पर भी भारी तबाही करती हैं।

सुनामी दो प्रकार से नुकसान करती है- एक तो ऊंची-ऊंची विनाशकारी लहरें जब बहुत तेज गति से तटों की ओर बढ़ती हैं तो ये वहां बहुत नुकसान पहुंचाती हैं, दूसरे तटीय क्षेत्रों में तेज गति से पहुंचे

समुद्रीय पानी से भी भारी नुकसान होता है। यदि सुनामी की लहरें तटीय क्षेत्र से दूर किसी गहरे समुद्र में उत्पन्न होती हैं तो उनका वेग 200 किलो मीटर प्रति घंटा तक हो सकता है जबकि ऐसी लहरें उथले समुद्र में 800 किलो मीटर प्रति घंटे की गति से भी तेज तटीय क्षेत्र की ओर बढ़ सकती हैं। हालांकि, यह भूकंप की तीव्रता पर निर्भर करता है कि सुनामी की लहरों का वेग कितना होगा।

भूकंप एवं सुनामी जैसी प्राकृतिक आपदाओं के अतिरिक्त हमारी धरती के भीतर से विस्फोटित होने वाले ज्वालामुखियों के कारण भी काफी विनाश होता है। भूकंप की इस ऊर्जा से पृथ्वी के क्रस्ट के किसी कमजोर स्थान से जब इसके भीतर का लावा एक विस्फोट के साथ बाहर निकलता है तो उसे **ज्वालामुखी** कहते हैं। धरती से विस्फोट के साथ किसी ज्वालामुखी के निकलने की घटनाएं भी पृथ्वी के अनेक रहस्यों में से एक है। आज भी पृथ्वी पर लगभग 540 ज्वालामुखी सक्रिय हैं जो कभी भी विस्फोट के साथ फट जाते हैं और पूरा इलाका मेगमा, भू-गर्भीय लावे एवं उसकी गैसों व धूल से भर जाता है। लोगों को धरती की सतह पर फूटने वाले ज्वालामुखी का तो पता चलता रहता है परन्तु समुद्र के भीतर कितने ज्वालामुखी फटते हैं, उनके विषय में आम लोगों को कुछ भी पता नहीं है। जानकारों का कहना है कि जहां-जहां हमारी पृथ्वी की प्लेट्स सरकती हैं, वहां पर ज्वालामुखी फट जाता है। इसके अलावा जहां पृथ्वी का क्रस्ट कमजोर होता है वहां से भी सेस्मिक ऊर्जा के द्वारा लावा बाहर आ जाता है। भू-वैज्ञानिकों का तो यहां तक कहना है कि हमारी 80 प्रतिशत धरती भूकंपों और ज्वालामुखी के मुहाने पर है अथवा वहां किसी भी समय भूकंप आने और ज्वालामुखी फटने की संभावना मौजूद रहती है। सामान्यतः 'मिड अटलांटिक रिज, मिड ऑशिनिक रिज' 'टैक्टोनिक प्लेटस' तथा 'पैसिफिक रिंग ऑफ फॉमर' पर ज्यादा ज्वालामुखी फटते हैं। ज्वालामुखी पृथ्वी के भीतर गहरे में निहित उग्र शक्ति का प्रस्फुटन भी कहा जाता है।

विगत दिनों अपने जापान प्रवास के दौरान मुझे भी कुछ सक्रिय ज्वालामुखी देखने को मिले जिनमें से कुछेक का वर्णन नीचे दिया जा रहा है। ये ज्वालामुखी यद्यपि आज इतने सक्रिय नहीं हैं लेकिन आज भी यहां पर अनेक भूगर्भीय गतिविधियां जिनमें ज्वालामुखी संबंधित गतिविधियां भी सम्मलित हैं, लगातार जारी हैं।

जापान में जियो-थर्मल गतिविधियों से संबंधित 20 ऐसे क्षेत्र हैं जहां पृथ्वी के भीतर की गर्मी एवं भाप उगलते हुए कुएं, गर्म पानी के झरनें, तपती हुई जमीनी सतह, सल्फर युक्त गर्म पानी के झरनों, तालाबों और झीलों की भरमार है। इन क्षेत्रों को **'नरक की घाटियों'** की संज्ञा दी गई है। नरक की घाटी जैसा अशुभ नाम जापान के सम्राट ने **'आवोकुदानी'** नामक एक ऐसी ही घाटी की यात्रा के दौरान दिया था। आबोकुदानी का अर्थ है एक बड़ी उबलती हुई घाटी। सल्फर की भाप के गुब्बार से भरी इस नरक की घाटी में आने पर एक ऐसा डर लगातार बना रहता है कि मानों कहीं मौत के आगोश में न समा जाए। इस घाटी की धरती नीचे से आज भी उबल रही है। यहां के उबलते हुए धरातल पर चलते हुए लगता है कि मानों यहां कभी भी विस्फोट या भूस्खलन हो सकता है। जमीन के नीचे से तेजी से निकलती भाप एवं उबलते हुए पानी से सदा एक डरावनी गूंज बनी रहती है। आबोकुदानी नामक इस नरक की घाटी में संभवतः जमीन के भीतर से तेजी से अतिरिक्त भाप किसी बड़े विस्फोट को रोकने के लिए ही निकलती रहती हो। यह नरक घाटी एक ऐसा पर्वतीय क्षेत्र है जहां पहाड़ी सतह से ज्वालामुखी गैसें निकल रही हैं, सल्फर एवं अन्य धातुओं से युक्त उबलता

हुआ पानी है और यहां की हवा में चहुंओर सल्फर की बदबू फैली रहती है।

जापान की **ओवाकुदानी** नामक नरक की घाटी तथा सोनजेन नामक जियोथर्मल क्षेत्र एक ऐसा क्षेत्र है जहां पर पृथ्वी के भीतर उत्पन्न हुई ज्वालामुखी की गर्मी बाहर स्थानांतरित होती रहती है। इस गर्मी की मात्रा प्रति वर्ष इतनी ज्यादा होती है कि उसकी क्षमता का एक मध्यम आकार के ज्वालामुखी विस्फोट से विसर्जित हुई ऊर्जा से तुलना की जा सकती है। **'हैकवन'** ज्वालामुखी जापान की राजधानी टोकियो से दक्षिण-पश्चिम में 80 किलोमीटर दूर स्थित दो ज्वालामुखी के लावे से निर्मित कैलडेरा हैं जो दोहरे स्वरूप में 110 वर्ग किलोमीटर में बना हुआ है। वास्तव में यह भी एक नरक की घाटी ही है। यहां झील अशीनोको ज्वालामुखी का ही एक गहरा गढ्ढा है। यह माना जाता है कि माऊंट हैकवन पर अंतिम विस्फोट लगभग 3 हजार वर्ष पहले हुआ था परन्तु आज भी इस क्षेत्र में भूगर्भीय विशेषकर जियोथर्मल एवं ज्वालामुखी क्रियाएं जारी हैं। इस इलाके में सल्फर के नारकीय धुएं के गुब्बार, गर्म पानी के चश्मे और गर्म नदियों का अनुभव किया जा सकता है।

जापान की दूसरी नरक की घाटी **'जिगोकुदानी'** है जो जापान के दक्षिण-पश्चिमी द्वीप होकाईडो के नोबोरिबेत्सु नामक शहर के ऊपरी जंगलों में एक पर्वतीय क्षेत्र में है। यह क्षेत्र शिकोत्सु टोया राष्ट्रीय पार्क का हिस्सा है। यह घाटी साफोरो शहर के दक्षिण-पश्चिमी में डेढ़ घंटे की दूरी पर है। यहां पहुंचने के लिए शहर के ऊपरी जंगली पहाड़ियों के मध्य पैदल चलने के आकर्षक ट्रेल्स भी बने हुए हैं। इस स्थान पर 50 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा जमीनी सतह का तापमान रहता है। जगह-जगह पर सक्रिय ज्वालामुखी की राख निकलती रहती है तथा सल्फर युक्त पानी की छोटी-छोटी धाराएं जमीन से फुटती रहती हैं। इस क्षेत्र में गर्म पानी के अनेक झरने हैं जो नोबोरिबेत्सु शहर के गर्म पानी के ऑनसन अर्थात् सल्फर युक्त पानी में सामुहिक स्नान करने के केन्द्रों का प्रमुख स्त्रोत है।

450 मीटर चौड़े रेडियस वाले इस ज्वालामुखी के मुहाने का निर्माण लगभग 10 हजार वर्ष पूर्व एक विस्फोट से हुआ था। हालांकि, उक्त ज्वालामुखी अब इतना सक्रिय नहीं है लेकिन इस घाटी से प्रति मिनट 3 हजार लीटर उबलता हुआ पानी निकलता है जो अपने खनिज लवणों की गुणवत्ता के कारण विश्व में अद्वितीय हैं। इसलिए जापान सरकार ने इस क्षेत्र को एक पर्यटन स्थल का दर्जा दिया हुआ है। जहां तक सुरक्षा प्रबन्धों का प्रश्न है, स्थानीय प्रशासन यहां की गतिविधियों पर लगातार नजर रखता है।

'जिगोकुदानी स्नो मंकीज' अर्थात् **'जिगोकुदानी याइन-कोइन'** जापान के लगभग मध्य में एक पर्वतीय क्षेत्र में स्थित एक छोटी सी घाटी है। यहां पर योकोयू नदी की घाटी में जिगोकुदानी मंकी पार्क भी है जो इस ठंडे क्षेत्र में संभवतः इसलिए रह पाते हैं क्योंकि यहां पर गर्म पानी के झरने एवं अनेक ऑनसन मौजूद हैं। योकोयू नदी जापान के नागानों प्रिफैक्चर के शिगाकोजेन नामक क्षेत्र से आती है जो समुद्र तल से 850 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। यहां का मौसम बड़ा विषम है तथा 4 महीनों तक यहां पर बर्फ जमा रहता है। शिगाकोजेन विन्टर स्पॉर्टस अर्थात स्कींग का मक्का कहलाता है जो जापान का ही नहीं संभवतः विश्व का सबसे बड़ा स्की और स्नोबोर्ड रिसोर्ट है। यहां पर 21 विभिन्न रिसोर्टस हैं जो एक सामुहिक लिफ्ट के माध्यम से एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं।

उल्लेखनीय है कि यहां पर सन् 1998 ई. में विन्टर ऑलम्पिक खेलों का भी आयोजन हुआ था। जिगोकुदानी में भी यहां की अन्य नरक की घाटियों की तरह उबलते

हुए पानी के झरने एवं चश्में हैं और यह स्थान भी पर्यटन के लिए प्रसिद्ध है। उपरोक्त के इलावा जापान में आशिकूराजी, तातेयामा-माची, नाकानीकावा-गून, (टोयामा प्रिफैक्चर) बेइतोयू तथा यांगमिंगसान, हकोनी मोतोतसूमिया, नोसवॉन्की जैसी कई और नरक की घाटियां हैं। जापान के अतिरिक्त ताईवान में भी एक नरक की घाटी है जो वैंकुऑन रोड के नजदीक झोंगसांग रोड, तेपई में मौजूद है। जहां तक विश्व में अन्य सक्रिय ज्वालामुखियों का संबंध है, उनमें इटली के माऊंट ऐटना पर ऐटना तथा स्ट्रोमबोली, रिपब्लिक ऑफ वानूआती में यासूर और अम्बरिम, पापूआ न्यूगिनीया द्वीप में 3, इंडोनेशिया में 3, जापान में 2, गोटेमाला में 2, कोस्टारिका, इक्वाडोर, अंटार्टिका, रियूनियन, हवाई, इथोपिया तथा सोमामिलया आदि देशों में एक-एक ज्वालामुखी आज भी सक्रिय है।

पृथ्वी पर आज भी कम से कम 500 सक्रिय ज्वालामुखी विद्यमान हैं जिनमें से लगभग 50 ज्वालामुखियों में प्रत्येक वर्ष विस्फोट होता रहता है। इन ज्वालामुखियों के पास 50 करोड़ लोग निवास करते हैं। एक मोटे अनुमान के अनुसार उत्तरी अमेरिका एवं इसके द्वीपों में लगभग 170 ज्वालामुखी हैं जिनमें से कई तो आज भी सक्रिय हैं। जहां तक भारत का प्रश्न है '**डैक्कन ट्रैप**' नामक दक्षिण पठार जो लगभग 15 लाख वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ क्षेत्र है जो कई ज्वालामुखियों से निकले लावे से निर्मित है। इस क्षेत्र का निर्माण लगभग 6 से लेकर 6.8 करोड़ वर्ष पहले हुआ था। भारत के अण्डेमान द्वीप समूह में 3 ज्वालामुखी आज भी सक्रिय हैं। इनमें बैरन द्वीप में विद्यमान ज्वालामुखी में सन् 2010-11 ई. में विस्फोट हुआ था जबकि बारातंग द्वीप में बारातंग नामक ज्वालामुखी 18 फरवरी 2003 में विस्फोटित हुआ था जिसमें से लावे के स्थान पर कीचड़ निकला था। अण्डेमान द्वीप समूह के एक अन्य छोटे से द्वीप (3x4) वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल वाले नारकोनडैम द्वीप में नारकोनडैम नामक ज्वालामुखी है।

हालांकि, ज्वालामुखियों से खेती के लिए उपजाऊ जमीन और धातु युक्त चट्टानें तो अवश्य प्राप्त होती हैं। लेकिन, इन से निकलने वाले लावे, आग, राख और जहरीली गैसों से बहुत सी जानलेवा दुर्घटनाएं भी होती रहती हैं। उल्लेखनीय है कि ज्वालामुखी की धूल से अनेक तरह के आर्थिक नुकसान भी होते हैं जिनमें हवाई मार्ग अवरूद्ध हो जाना भी एक बड़ी समस्या है। ज्वालामुखी की राख एवं धूल बहुत ही महीन होती है तथा जब यह हवाई जहाज के ईंजन में घुस जाती है तो इससे बहुत ज्यादा नुकसान होता है। उल्लेखनीय है कि सन् 2010-11 ई. में यूरोप के लगभग तमाम हवाई अड्डे ज्वालामुखी से उत्पन्न हुई धूल एवं राख की वजह से बंद करने पड़े थे

* लेखक हमारा भूमंडल पत्रिका के मुंबई स्थित ब्यूरो प्रमुख हैं

SUPER FLOORINGS

INNOVATING TO CUSTOMERS NEEDS SINCE 1988

HOLDING PATTERN

Private Limited

ACCREDITATIONS

ISO 9001-2015
ISO/TS 169 49:2009

PRODUCT BRANDS

ITALEX®
VINYL FLOORING

MANUFACTURERS & EXPORTERS OF Insulation Sheets For Automotive and Construction , Waterproofing Membranes ,Rubber Tiles, Rubber Crumb Floorings , Multi Application Sheets, Melt Sheet Membranes & Auto Mats

Our Product Line

PVC FLOORINGS

AUTOMOTIVE PVC MATS

TPO-TPE

TRANSPORTFLOORINGS

Few of Our Customer Base

FIAT | Ford | HONDA | HYUNDAI | ISUZU

Mahindra | SUZUKI | TATA | TOYOTA | VW

CONNECT WITH US

SUPER FLOORINGS PVT. LTD.

WORKS: 5th Km Stone ,Vill. Aurangabad ,Delhi Road ,Yamuna Nagar, Haryana
Phone: +91 93553 61232
E-mail: info@superflooringsgroup.com, contact@superflooringsgroup.com
www.superflooringsgroup.com

भूपिंदर सिंह रिणवा

जीवन और जलवायु को प्रभावित करते हैं महासागर

अंतरिक्ष से सूर्य की परिक्रमा करती हुई पृथ्वी एक सुन्दर नीले संगमरमर की बड़ी गेंद की तरह दिखती है। पृथ्वी की 71 प्रतिशत सतह पर विशाल महासागर विद्यमान हैं। स्पष्ट है, इनके नीले जल की वजह से ही पृथ्वी एक नीले ग्रह के रूप में दिखाई देती है।

समुद्र एवं महासागर एक शानदार एवं उत्कृष्ट सुन्दरता और मानवीय जीविका के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। बहुत से लोगों की आजीविका समुद्रों पर निर्भर है लेकिन इनसे उठने वाले शक्तिशाली तूफान और सुनामी भयंकर तबाही भी ला सकते हैं। फिर भी, महासागरों ने पृथ्वी के आकार और इसकी जलवायु को बहुत अधिक गहन तरीकों से आकार तो दिया ही है, इन्हें प्रभावित भी किया है। उल्लेखनीय है कि, जीवन के उत्पन्न होने की सबसे ज्यादा संभावना महासागरों से होने की ही है। करोड़ों वर्ष पहले असंख्य समुद्री जीवों के सहयोग से ही वायुमण्डल का भी निर्माण हुआ। समुद्रों में समाहित असीमित ऊर्जा एवं ऊष्मा के आदान-प्रदान से ही महासागरों और वायुमण्डल के बीच हवाएं चलती हैं तथा दुनियाभर में वायमण्डलीय परिसंचरण होता है।

इन्हीं हवाओं के कारण ही महासागरों की जल-धाराएं बहती हैं और गहरे सागरों में उलट-पलट करने वाली धाराओं का प्रवाह होता है। वस्तुतः समुद्र ही जलवायु के प्रभाव को संतुलित करते हैं। ये कार्बन डाइ ऑक्साइड गैसों एवं अधिक गर्मी को अवशोषित करके ग्रीन हाउस गैसों के बढ़ते स्तर को घटाते हैं। जाहिर है, महासागरों के बिना तो पृथ्वी पर जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वैसे भी, इनके बिना तो पृथ्वी एक अलग स्थान प्रतीत होगा।

समुद्र विज्ञान के वैज्ञानिकों का कहना है कि जीवाश्म ईंधन के जलने और उष्णकटिबंधीय वर्षावनों की कटाई से वायुमण्डल में कार्बन डाइ ऑक्साइड की संघनता बढ़ जाती है जिससे जलवायु भी धीरे-धीरे गर्म होती है। महासागर ही जलवायु परिवर्तन में एक प्रतिरोधी के रूप में महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। समुद्री जीव प्रकाश-संश्लेषण क्रिया से वायुमण्डल की कार्बन डाइ ऑक्साइड लेकर उसे कार्बोहाइड्रेट में बदलते हैं। इन्हीं जीवों के द्वारा कार्बन डाइ ऑक्साइड अवशोषित करने से जीवाश्म ईंधन और चूना पत्थर जैसे खनिज भी समुद्रों में निर्मित होते हैं।

समुद्र के पानी में वायुमण्डल से 40 गुणा ज्यादा कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस को अवशोषित करने की क्षमता है। यह गैस आर्कटिक और अंटार्कटिक महासागरों के ठंडे जल में घुली रहती है जहां से यह समुद्र की गहरी धाराओं के माध्यम से गहरे महासागरों में चली जाती हैं। सैंकड़ों वर्षों के बाद जब हवाओं और समुद्री ज्वार का मिश्रण होता है तो तब यह गैस पानी की सतह पर पहुंच कर वायमुण्डल में वापिस विलीन हो जाती है। महासागरों का जल वायुमण्डल से ऊष्मा को अवशोषित करके जलवायु परिवर्तन की गति को धीमा करता है।

प्रत्येक वर्ष 8 जून के दिन को **'विश्व महासागर दिवस'** के रूप में विगत 22 वर्षों से अनाधिकारिक रूप से मनाया जा रहा था। ब्राजील के रियो डी जेनेरियो शहर में सन् 1992 ई. में आयोजित हुए **पृथ्वी शिखर सम्मेलन** में महासागरों के महत्त्व को देखते हुए कनाडा ने इस दिन को मनाने का प्रस्ताव पेश किया था। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने सन् 2000 ई. में **विश्व महासागर दिवस** को अधिकारिक तौर पर मान्यता प्रदान की और तब से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर **विश्व महासागर नेटवर्क** और **महासागर परियोजना** समन्वित होकर वैश्विक भागीदारी के साथ विश्व महासागर दिवस सफलतापूर्वक मना रहे हैं।

के मात्र 5 से 7 प्रतिशत हिस्से के विषय में ही जानकारी प्राप्त हुई है और शेष के विषय में अभी तक अज्ञानता है। पृथ्वी के महासागरों का कुल आयतन लगभग 1.3 अरब क्यूबिक किलोमीटर है जबकि इनकी औसत गहराई 3,682 मीटर है। मुख्य रूप से महासागर पृथ्वी का जलमंडल है। इसलिए इस ग्रह के जीवन के सभी ज्ञात रूपों और कार्बन चक्र का भी ये हिस्सा हैं। महासागर जलवायु और मौसम के मिजाज को प्रभावित करते हैं तथा इनमें लाखों ज्ञात समुद्री जीव-जन्तुओं की प्रजातियों का निवास है। ज्ञात हो, मनुष्य ने अब तक जीवों की 2,30,000 महासागरीय प्रजातियों का ही पता लगाया है जबकि अनुमान है कि अब भी इनमें 20 लाख प्रजातियों के समुद्री जीव-जन्तु रहते हैं। पृथ्वी पर महासागरों की उत्पत्ति के विषय में अभी तक किसी को कोई सटीक ज्ञान नहीं है। परन्तु माना जाता है कि पृथ्वी पर पहले भूगर्भिक युग के दौरान ही महासागर बने थे और इन्हीं से ही जीवन का उद्भव हुआ था।

नमक और अमोनिया के यौगिकों ने समुद्री जल में घुल कर इसके जमने के अंक - **हिमांक** को कम कर दिया है जिससे कि बहिःपार्थिव वातावरण में नमकीन जल या कन्वेक्शन बर्फ यानि बहुत ही ठण्डे पानी के रूप में ज्यादा मात्रा में रह सके। आमतौर पर महासागर को हालांकि कई अलग-अलग समुद्रों और महासागरों के रूप में वर्णित किया जाता है, परन्तु इन सभी का जल नमक की एक वैश्विक और परस्पर जुड़ी हुई जलराशि है जिसे यदि **विश्व महासागर** या **वैश्विक महासागर** भी कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं है। निरन्तर बहने वाली महासागरों की जलनिधि अपने ही प्रवाह में से अपेक्षाकृत मुक्त आदान-प्रदान करती है।

जल के घनत्त्व की दृष्टि से महासागरों को तीन क्षेत्रों में बांटा जा सकता है। जैसे समुद्र की सतह का क्षेत्र, तेजी से बदलते घनत्व का पाइकनेक्लाइन क्षेत्र और गहरे जल का क्षेत्र। सतह क्षेत्र के जल को मिश्रित जल भी कहा जाता है, महासागर के ऊपर वाले क्षेत्र को दर्शाता है। इस क्षेत्र में तापमान और लवणता समुद्री धाराओं और तरंगों की कार्रवाई के चलते अपेक्षाकृत स्थिर होती है। सतह क्षेत्र का समुद्री जल वायुमण्डल एवं रोशनी के संपर्क में रहता है। लिहाजा, यह जल सागर के सबसे कम घनत्व वाला जल है और यह महासागरों के कुल जल का मात्र 2 प्रतिशत ही है। आमतौर पर, समुद्रों की सतह का जल 500 से 3300 फुट की गहराई तक का ही होता है, परन्तु कटिबंधों और उच्च अक्षांश

महासागर पृथ्वी पर खारे पानी के विशाल भण्डार और पृथ्वी के हाइड्रोस्फीयर का मुख्य हिस्सा हैं। महासागरों से ही हमें खाने का नमक प्राप्त होता है। समुद्रों में घुले 6 तत्त्वों - क्लोरीन, सोडियम, मैगनीशियम, सल्फर, कैल्शियम और पोटोशियम जैसे लवणों से ही नमक बनता है। विशालता की दृष्टि से प्रशांत महासागर, अटलांटिक महासागर, हिंद महासागर, दक्षिणी अथवा अंटार्कटिका महासागर और आर्कटिक महासागर पृथ्वी के 5 मुख्य महासागर हैं। एक समुद्र और एक महासागर के बीच बहुत अंतर है। किसी महासागर के जमीन के नजदीक के क्षेत्र या आंशिक रूप से या चारों ओर से घिरे महासागरीय नमकीन जल को समुद्र कहते हैं। इस ब्रह्माण्ड में अब तक पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जहां बड़ी मात्रा में खारे पानी वाले महासागर मौजूद हैं। महासागरों का नमकीन पानी पृथ्वी के लगभग 72 प्रतिशत भूभाग पर व्याप्त है और ये महासागर धरती की सतह पर 71 प्रतिशत क्षेत्र को कवर करते हैं। महासागरों में धरती के कुल जल का 97 प्रतिशत पानी है। समुद्र विज्ञान से संबंधित वैज्ञानिकों का कहना है कि अब तक विश्व के महासागरों

महासागरों की जल-धाराएं पृथ्वी की जलवायु को बेतरह ढंग से प्रभावित करती हैं। ये धाराएं उष्ण-कटिबंधीय गर्मी को पृथ्वी के ध्रुवीय क्षेत्रों में स्थानांतरित करके जलवायु को प्रभावित करती हैं। इन्हीं गर्म और ठण्डी धाराओं के कारण हवाओं का हस्तांतरण होता है और जब ये हवाएं महासागरों के ऊपर से गुजरती हैं तो वाष्पकणों को समाहित करके पृथ्वी के तटीय क्षेत्रों एवं जहां तक ये हवाएं पहुंचती हैं, वर्षा करती हैं। समुद्री जल के सतह की ऊष्मा और समुद्रों में मीठे पानी का प्रवाह एक वैश्विक घनत्व को ढलवां कर देता है जिससे **थर्मोहैलाइन सर्कुलेशन** के माध्यम से समुद्री धाराओं का प्रचलन होता है।
प्रमुख समुद्री प्रभागों को आंशिक रूप से महाद्वीपों, विभिन्न द्वीप समूहों और अन्य मानदण्डों के आधार पर परिभाषित किया गया है। क्षेत्र के घटते क्रम में प्रशान्त महासागर, अटलांटिक महासागर, हिंद महासागर, दक्षिणी महासागर और आर्कटिक महासागर **विश्व महासागर** के प्रमुख प्रभाग हैं। महासागरों के छोटे क्षेत्र को समुद्र, गल्फ, खाड़ी और जलसंधि आदि नामों से पुकारा जाता है। भौगोलिक दृष्टि से महासागर समुद्री क्रस्ट के वे क्षेत्र हैं जिन्हें पानी ने कवर किया हुआ है। समुद्री क्रस्ट ठोस ज्वालामुखी बेसाल्ट की पतली परत है जिसमें पृथ्वी के प्रावरण को ढका हुआ है। यह महाद्वीपीय क्षेत्र में मोटी परन्तु कम सघन होती है। इस दृष्टिकोण से तो पृथ्वी के तीन ही महासागर हैं- विश्व महासागर, कैस्पियन सागर और काला सागर। कैस्पियन सागर और काला सागर का गठन लॉरेशिया तथा सिमेरिया की टक्कर से हुआ था। भूमध्य सागर बहुत बार एक अलग सागर प्रतीत होता है क्योंकि टैक्टोनिक प्लेट के हिलने से उसका संबंध विश्व महासागर से जिब्राल्टर की खाड़ी पर बार-बार टूटा है। काला सागर बोसफोरस जलसंधि के माध्यम से मारिमारा समुद्र तथा दर्दानेल्स जलसंधि के द्वारा भूमध्य सागर से मिलता है। भूमध्य सागर का यह जल पूर्वी यूरोप और पश्चिमी एशिया को अलग करता है।

प्रशान्त महासागर : भौगोलिक दृष्टि से प्रशान्त महासागर पृथ्वी के तमाम समुद्रों में सबसे बड़ा है। यह उत्तर में आर्कटिक महासागर से दक्षिणी महासागर तक फैला हुआ तथा पश्चिम एशिया और ऑस्ट्रेलिया तथा पूर्व में अमेरिका महाद्वीपों से घिरा हुआ है। यह महासागर पृथ्वी के 46 प्रतिशत क्षेत्र के जलमण्डल और एक तिहाई भूमि क्षेत्र से बड़ा है। इसका

वाली समुद्रों की सतहों पर यह जल पूरी तरह से न के बराबर होता है। ज्यादा ठण्डे और सघन जल का कटिबंधों और उच्च अक्षांशीय क्षेत्रों में अवस्थांतरण अधिक आकस्मिक होता है। पाइकनेक्लाइन क्षेत्र का समुद्री जल उस क्षेत्र को संदर्भित करता है जिसमें गहराई वाले महासागर के जल में घनत्व वास्तव में काफी बढ़ जाता है। यह जल क्षेत्र महासागरों के जल का 18 प्रतिशत तक है। महासागरों के गहरे जल का क्षेत्र मध्य अक्षांशों में 3300 फुट से नीचे की जलराशि होती है। यह कुल महासागरीय जल का लगभग 80 प्रतिशत भाग है। इस जल में घनत्व सबसे निम्न स्तर पर होता है और यह जल अपेक्षाकृत ठण्डा और स्थिर होता है।

महासागरों का सबसे गहरा स्थान **'मारियाना ट्रैंच'** है जो प्रशान्त महासागर में उत्तरी मारियाना द्वीप के पास स्थित है। इस ट्रैंच की अधिकतम गहराई 10,971 मीटर है। जापान के पास **'चैलेंजर डीप'** भी समुद्र तल से 10,924 मीटर गहरी है और यह भी महासागरों के सबसे गहरे स्थानों में से एक है।

क्षेत्रफल 16,52,50,000 वर्ग किलोमीटर है। विश्व का सबसे गहरा स्थान भी इसी महासागर में है। प्रशान्त महासागर अपने आकार की वजह से ही महत्त्वपूर्ण नहीं है बल्कि यह व्यापारिक मार्गों, प्रवास और खोज संबंधित अन्वेषणों के ऐतिहासिक मार्गों के लिए भी प्रसिद्ध है। भूमध्य रेखा प्रशान्त महासागर को उत्तरी प्रशान्त महासागर और दक्षिणी प्रशान्त महासागर में विभाजित करती है। हालांकि, **गलापागोस** और **गिल्बर्ट द्वीपसमूह** भूमध्य रेखा के दोनों ओर फैले हुए हैं परन्तु उन्हें दक्षिण प्रशान्त महासागर में ही माना जाता है।

पूर्वी प्रशान्त महासागर को सबसे पहले यूरोपिय लोगों ने 16वीं शताब्दी की शुरूआत में तब देखा था जब एक स्पैनिश खोजी **'वास्को नुनेज डी बाल्बोआ'** ने **पनामा के इस्तमस** को सन् 1513 ई. में पार किया था। उसने इस तब के दक्षिणी महासागर को **'मार डेल सुर'** नाम दिया था। हालांकि, इस महासागर का मौजूदा नाम सन् 1521 ई. में एक पुर्तगाली समुद्री यात्री **फर्डिनांड मैगलन** ने उस समय दिया था जब वह एक स्पैनिश अभियान के दौरान प्रशान्त महासागर में गया था। मैगलन – इल्कानों की विश्व भ्रमण की यह समुद्री यात्रा मानव इतिहास में दुनिया भर की पहली यात्रा थी। जब मैगलन का जहाज इस महासागर में पहुंचा तो उसे वहां अनुकूल हवाएं मिली जिससे उसने पुर्तगाली भाषा में **'मार पेसिफिको'** कहा जिसका अर्थ होता है शान्तिपूर्ण समुद्र और इस तरह इसका नाम **पेसिफिक** अर्थात् **प्रशान्त महासागर** पड़ गया। प्रशान्त क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण मानवीय प्रवास प्रागैतिहासिक काल में हुआ। संभवतः ऑस्टोनेशियाई भाषी ताईवान द्वीप पर रहने वाले लोगों ने लम्बी दूरी की डोंगी यात्रा की कला में महारथ तब तक हासिल कर ली थी और यही वजह है कि उन्होंने स्वयं एवं अपनी भाषा को माइक्रोनेशिया और मलेनेशिया के दक्षिणी फिलीपींस, इंडोनेशिया और पूर्वी द्वीपों तक भी फैला लिया था। सबसे बड़ा माइग्रेशन पॉलिनेशियन के माध्यम से महासागर के एशियाई छोर से ताहिती, हवाई, न्यूजीलैंड, ईस्टरद्वीप और संभवतः अमेरिका तक में हुआ है।

प्रशान्त महासागर विश्व के सबसे महत्त्वपूर्ण व्यापार मार्गों के लिए प्रयोग किया जाता है जिनमें चीन, जापान, दक्षिणी कोरिया और ताइवान जैसे देशों से लेकर सिंगापुर, थाईलैंड, मलेशिया तक में अमेरिका को आयात निर्यात किया जा रहा है। प्रशांत महासागर के व्यापार में पश्चिम से लेकर पूर्व तक और उत्तर से दक्षिण तक किए जाने वाला विश्व व्यापार सम्मिलित है। मुख्यतः पश्चिम से पूर्व की ओर और उत्तर से दक्षिण की ओर उच्च मूल्य-संवर्धित निर्मित वस्तुएं भेजी जाती हैं, जबकि पूर्व से पश्चिम तक और दक्षिण से उत्तर की ओर हल्के उत्पाद और कच्चा माल भेजा जाता है।

अटलांटिक महासागर : यह महासागर प्रशान्त महासागर के बाद दुनिया का सबसे बड़ा महासागर है जिसका क्षेत्रफल 10,64,00,000 वर्ग किलोमीटर है। यह महासागर अफ्रीका, यूरोप और दक्षिणी महासागर के बीच पश्चिमी गोलार्द्ध में स्थित है। यह पृथ्वी की सतह के 20 प्रतिशत और 29 प्रतिशत जलीय क्षेत्र को कवर करता है। जर्मनी की कील नहर, डेनमार्क एवं स्वीडन के बीच **ओरिसूड, तूर्की का बासफोरस** तथा **मोरक्को-स्पेन की जलसंधियां, जिब्राल्टर की खाड़ी** और अमेरिका एवं कनाडा का **सेंट लॉरेंस सी वे** इस महासागर के महत्त्वपूर्ण सामरिक प्रवेश जलमार्ग हैं। अंतर्राष्ट्रीय जल सर्वेक्षण संगठन ने सन् 2000 ई. में दक्षिण महासागर के परिसीमन के लिए अटलांटिक महासागर के एक दक्षिणी हिस्से को 60 डिग्री दक्षिण तक हटा दिया था। महासागर का जलक्षेत्र पश्चिमी गोलार्द्ध में अफ्रीका, यूरोप और दक्षिणी

महासागर के बीच फैला हुआ है। इसके क्षेत्रीय सागरों में बाल्टिक सागर, सेल्टिक सागर, काला सागर, कैरिबियन सागर, डेविस जलसंधि, डेनमार्क जलसंधि, ड्रेक पैसेज के हिस्से, मैक्सिको की खाड़ी, हड़सन की खाड़ी, लैब्राडोर सागर, भूमध्य सागर, उत्तरी सागर, नार्वे सागर तथा लगभग संपूर्ण स्पोटिया सम्मलित हैं। इस महासागर की औसत गहराई 3,926 मीटर है जबकि इसका सबसे गहरा स्थान **मिलवौकी डीप** है जोकि समुद्र तल से 8,380 मीटर गहरी है। इसके अलावा **प्यूटो रिको ट्रैंच** भी इस महासागर के गहरे स्थानों में से एक है। इसकी गहराई 8,605 मीटर है।

अटलांटिक महासागर की तटीय लम्बाई 1,11,866 किलोमीटर है। जहां तक इसकी जलवायु का प्रश्न है, महासागर में अफ्रीका के **केप वर्दे** तट के पास उष्णकटिबंधीय चक्रवात उठते हैं जो पश्चिम में कैरिबियन सागर की ओर चलते हैं। यहां मई से दिसम्बर तक तूफान उत्पन्न होते रहते हैं लेकिन अगस्त से नवम्बर तक ये तूफान बारंम्बार उठते हैं। इन समुद्री तूफानों से विश्व की जलवायु बहुत प्रभावित होती है।

अटलांटिक महासागर के लैब्राडोर सागर, डेनमार्क जलसंधि और बाल्टिक सागर के तटीय क्षेत्रों की सतह अक्तूबर से जून तक समुद्री बर्फ से ढकी रहती है। इस महासागर के उत्तर में घड़ी की दिशा की ओर अर्थात् दक्षिणवर्ती तथा दक्षिण में विपरीत दिशा में गर्म जल की धाराएं प्रसारित होती हैं। महासागर के तल पर **'मध्य अटलांटिक रिज'** का वर्चस्व है जो संपूर्ण अटलांटिक बेसिन में उत्तर से दक्षिण की ओर एक उबड़-खाबड़ सेंटरलाइन जैसी फैली हुई है। महासागर के दक्षिण-पश्चिम में **ड्रेक पैसेज** अटलांटिक महासागर को प्रशान्त महासागर के साथ जोड़ता है तथा मानव निर्मित **पनामा नहर** भी दोनों महासागरों को जोड़ती है। अटलांटिक महासागर की अधिकांश भूगर्भीय गतिविधि मध्य अटलांटिक रिज के साथ केन्द्रित होने की वजह से इस महासागर को एक निष्क्रिय सीमांत महासागर भी समझा जाता है। निष्क्रिय सीमांत अर्थात् मार्जिन सामुद्रिक और महाद्वीपीय लिथस्पीयर के बीच परिवर्तन को कहते है। यह प्लेट मार्जिन नहीं होता है, बल्कि निष्क्रिय मार्जिन का निर्माण किसी प्राचीन दरार के ऊपर तलछट के जमने के कारण होता है।

मध्य अटलांटिक रिज अटलांटिक महासागर को दो बड़ी गहरी घाटियों में विभक्त करता है। ये गहरी घाटियां 3,700 मीटर से 5,500 मीटर तक गहरी हैं। समुद्र की ट्रॉफ को घाटी कहते हैं। यह गड्ढों का एक रेखागत ढांचा होता है जो काफी दूर तक फैला होता है। परन्तु एक समुद्री खाई की अपेक्षा समुद्री घाटी कम खड़ी होती है। महाद्वीपों और मध्य अटलांटिक रिज के बीच मौजूद तिरछी छोटी रिज समुद्र तल को कई कम गहरी घाटियों में विभाजित करती है। इनमें उत्तरी अटलांटिक में ब्लैक, गयाना, उत्तरी अमेरिकन घाटी, केपवर्डे और कैनरी घाटियां हैं जबकि दक्षिण अटलांटिक में अंगोला, केप अर्जेंटिना और ब्राजील घाटियां हैं। इस महासागर की गहराई वाला तल लगभग सपाट और सीधा है परन्तु कहीं-कहीं गहराईयां भी हैं। महासागर में अथाह मैदानी क्षेत्र, गहरी खाईयां, सीमाऊंट, घाटियां, पठार और समतल चोटी वाली वाले समुद्री पहाड़ भी हैं। फरवरी से अगस्त तक अटलांटिक महासागर के डेविस जलसंधि, डेनमार्क जलसंधि और पश्चिमोत्तर अटलांटिक महासागर में प्रायः हिमखंड बहते रहते हैं जिन्हें दक्षिणी बरमूडा और मडेइरा तक देखा जा सकता है। समुद्री जहाजों को इन हिमखण्डों से बचाने

Special Steel Components Corporation
• AN ISO 9001, ISO 14001 & OHSAS 18001 CERTIFIED COMPANY •
Process Control Solutions & Turnkey Instrumentation Projects for Oil and Gas Refineries and Petrochemical Industries. World Class & Hightech Equipment, Safety Fittings, Valves / Gauges and Computerized System For Large LPG Storage & Bottling Plants.
BSI
IAF
ANAB
ACCREDITED
INTEGRATED MANAGEMENT SYSTEM
In Technical Collaboration With
TOKYO KEISO CO., LTD. JAPAN
MIDLAND MANUFACTURING CORPORATION
USA
ROCHESTER GAUGES INTERNATIONAL S.A. USA & EUROPE
SCG
SCG (Thailand)
REGO PRODUCTS
LP-GAS EQUIPMENT
ECII Engineered Controls International, Inc.
Germany
METAL GOODS
COMPANY
MGM
EXCESS FLOW CHECK VALVES
USA
M-9, Industrial Area, Yamunanagar - 135 001 (Haryana) INDIA
Tel.:+91-1732-255055 to 60 • Fax:+91-1732-255057 • E-mail:info@specialsteel.net
• Web:www.specialsteel.net

के लिए अक्तूबर से मई तक उत्तरी अटलांटिक में समुद्री जहाजों पर सुपर स्ट्रक्चर के बर्फ काटने वाले यंत्र लगाने पड़ते हैं। मई से सितम्बर के बीच महासागर में लगातार रहने वाला कोहरा समुद्री यात्रा में भारी जोखिम वाला है जबकि भूमध्य रेखा के उत्तर में मई से दिसम्बर तक तूफान उठते हैं।

अटलांटिक महासागर का इसके आसपास के देशों के विकास और अर्थव्यवस्था में वृद्धि के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान है। प्रमुख **ट्रांसाटलांटिक परिवहन** और संचार मार्गों के अलावा अटलांटिक महासागर की महाद्वीपीय तलछटी चट्टानों में प्रचुर मात्रा में पेट्रोलियम और खनिज लवण जमा हैं। इस महासागर में मछलियों के सबसे समृद्ध संसाधन हैं। यहां पाई जाने वाली मछलियों में कॉड, हेडेक, हेक, हेरिंग और मैकेरल आदि हैं। इस महासागर में मछलियों को सबसे अधिक उत्पादक क्षेत्रों में **न्यूफाउंडलैंड के ग्रैड बैंक, नोवा स्कोटिया की चट्टानी पट्टी, केप कॉड से जॉर्ज बैंक, बाहामा बैंक, आइसलैंड** के आसपास का जलीय क्षेत्र, **आयरिश सागर**, उत्तरी सागर के डोगर बैंक, फॉकलैंड बैंक आदि क्षेत्र हैं। इस महासागर में मछलियों के अलावा झींगा और व्हेल भी बड़ी मात्रा में दिखाई देती हैं। अटलांटिक महासागर के तटों पर यूरोप के 17, अफ्रीका के 28, दक्षिणी अमेरिका के 11, कैरिबियन द्वीप समूह के 30 तथा मध्य और उत्तरी अमेरिकी महाद्वीप के 12 देश लगते हैं।

अटलांटिक के अधिकांश तटीय क्षेत्र नीचे और भौगोलिक दृष्टि से शान्त हैं परन्तु यहां सील, समुद्री लॉयन, कछुए, मछली और व्हेल जैसी लुप्तप्रायः समुद्री प्रजातियों को पकड़ने के ड्रिफ्ट नेट की वजह से इस महासागर में इनकी संख्या बेहद कम हो रही है। इसके अलावा पश्चिमी अमेरिका, दक्षिणी ब्राजील और पश्चिमी अर्जेंटिना के शहरों से निकलने वाले नगरीय प्रदूषण से महासागर में स्लज प्रदूषण फैल रहा है। मैक्सिको की खाड़ी, मारकेबो झील, भूमध्य सागर, उत्तरी सागर तथा कैरिबियन सागर में तेल प्रदूषण फैल रहा है। इसी तरह बाल्टिक सागर, उत्तर सागर, भूमध्य सागर और आर्कटिक महासागर के शहरों का प्रदूषण भी इस महासागर में आकर मिल रहा है। इस महासागर में तेल के रिसाव, समुद्री मलबे और जहरीले कचरे के जलाने से बढ़े प्रदूषण और पर्यावरण के अन्य खतरों को कम करने के लिए विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संधियों के प्रयास हुए हैं। **'संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम'** और **'क्षेत्रीय समुद्री कार्यक्रम'** के माध्यम से प्रदूषण कम करने और तटीय प्रबन्धन के लिए भी अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का आह्वान किया जा रहा है।

हिंद महासागर : हिंद महासागर दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा महासागर है जो पृथ्वी के जल क्षेत्र के 20 प्रतिशत हिस्से में फैला हुआ है। इस महासागर के उत्तर में भारत, पश्चिम में अफ्रीका, पूर्व में ऑस्ट्रेलिया और दक्षिण दक्षिणी महासागर और अंटार्कटिका हैं। वैसे तो इस महासागर की समुद्री सीमा तय करना बड़ा ही जटिल है परन्तु सबसे आम सहमति के अनुसार हिंद महासागर को अटलांटिक महासागर से **केप अगुलहास** से दक्षिण में चल रही 20° पूर्वी देशांतर रेखा और प्रशान्त महासागर से 146° 55' पूर्वी देशांतर रेखाओं के बीच निरूपित किया गया है। तस्मानिया और ऑस्ट्रेलिया के बीच **बास जलसंधि** को कुछ लोग हिंद महासागर का हिस्सा मानते हैं लेकिन कुछ इसे प्रशान्त महासागर का हिस्सा बताते हैं। इस महासागर की सबसे ऊपरी सीमा फारस की खाड़ी में 30° उत्तर है। हिंद महासागर की

दक्षिणी सीमा पर अब तक कोई सार्वभौमिक समझौता नहीं है, फिर भी इसका क्षेत्रफल 7,35,60,000 वर्ग किलोमीटर है।

हिंद महासागर का नमकीन जल अफ्रीका और ऑस्ट्रलिया के दक्षिणी सिरों के बीच लगभग 10,000 किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। इस महासागर की औसत गहराई 3,960 मीटर है जबकि इसका सबसे गहरा स्थान **डायमनटिना द्वीप** में **डायमनटिना ट्रैंच** है जिसकी गहराई 8,047 मीटर है। इसके अलावा जावा के दक्षिणी तट पर **जावा ट्रैंच** की सूंडा डीप भी इस महासागर के गहरे स्थानों में से एक है। सूंडा डीप की गहराई 7,450 मीटर है। इस महासागर के उत्तर में ईरान, पाकिस्तान, भारत और बांग्लादेश, पूर्व में मलय प्रायद्वीप, इंडोनेशिया के सूंडा द्वीप समूह और तिमोर लस्ते द्वीप एवं ऑस्ट्रेलिया हैं। दक्षिण में दक्षिणी सागर और अंटार्कटिक तथा पश्चिम में अफ्रीका और अरब प्रायद्वीप हैं। दक्षिण-पश्चिम में हिंद महासागर, अफ्रीका के दक्षिणी सिरे पर अटलांटिक महासागर में तथा पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व में इस महासागर का जल प्रशान्त महासागर के जल में मिलता है। भौतिक दृष्टि से यह महासागर सबसे जटिल महासागर है। जहां तक इसके सीमांत समुद्रों का प्रश्न है, अन्य बड़े महासागरों की अपेक्षा इसके बहुत ही कम क्षेत्रीय समुद्र हैं। इस महासागर के उत्तर में महाद्वीपों के भीतर स्थित लाल सागर और फारस की खाड़ी, पश्चिमोत्तर में अरब सागर, पूर्वोत्तर में अण्डेमान सागर, उत्तर पश्चिम में अदन और ओमान की खाड़ी तथा उत्तर पूर्व में बंगाल की खाड़ी जबकि ऑस्ट्रेलिया की ओर ग्रेट ऑस्ट्रेलियन बाइट इसके सागरीय निकाय हैं।

हिंद महासागर के महाद्वीपीय किनारों पर छोटे-छोटे द्वीप भी हैं जिनमें विश्व का चौथा सबसे बड़ा द्वीप मेडागास्कर, बहरीन, कामोरोस, मालदीव, मॉरीशस, सेशेल्स और श्रीलंका जैसे द्वीपीय देश हैं। महासागर के 50 डिग्री दक्षिणी अक्षांश के उत्तर में 86 प्रतिशत बेसिन समुद्री तलछट से निर्मित हुआ है। 'बाब अल मनडेव', होर्मुज जलसंधि, लोमबोक जलसंधि, मलक्का जलसंधि और पाक जलसंधि महासागर के सबसे संकीर्ण बिन्दू हैं। इस महासागर की जलवायु भूमध्य रेखा के उत्तर में मानसून से प्रभावित होती है। अक्तूबर से अप्रैल तक प्रबल पूर्वोत्तर हवाएं चलती हैं जबकि मई से अक्तूबर तक दक्षिणी-पश्चिमी हवाएं प्रबल रहती हैं। अरब सागर के उग्र मानसून से भारतीय उपमहाद्वीप में भारी बरसात होती है। दक्षिणी गोलार्द्ध में आमतौर पर हवाएं ठण्डी रहती हैं परन्तु मॉरिशस के पास उठने वाले तूफान काफी तीव्र होते हैं। जब मानसूनी हवाएं रूख बदलती हैं तो कभी-कभी बंगाल की खाड़ी और अरब सागर पर चक्रवात टकराते हैं जिससे भारत के तटीय क्षेत्रों में शीतकालीन वर्षा होती है।

हिंद महासागर दुनिया का सबसे गर्म महासागर तो है ही, यह सबसे युवा भी है। इस महासागर में फैलती हुई सक्रिय चट्टानें भी हैं जो मध्य समुद्री रिज की वैश्विक प्रणाली का हिस्सा हैं। इनमें कार्ल्सबर्ग रिज, दक्षिणी-पश्चिमी भारतीय रिज, दक्षिण-पूर्वी भारतीय रिज और केन्द्रीय भारतीय रिज प्रमुख हैं। **'मिड-ऑशिनिक रिज'** अर्थात् मध्य समुद्री रिज जल के नीचे एक विस्तृत पर्वत श्रृंखला है जो हिंद महासागर में एशिया से अंटार्कटिका तक फैली हुई है। यह रिज महासागर को तीन प्रमुख वर्गों- अफ्रीकी, अंटार्डिस और ऑस्ट्रेलाशियन में बांटती है। इस रिज की औसत ऊंचाई 3,000 मीटर है जबकि इसकी कुछ चोटियां तो द्वीपों के रूप में भी उभरी हुई हैं। **'ग्रेट रिफ्ट वैली'** की पूर्वी शाखा जो अदन की खाड़ी से होकर गुजरती है, इस महासागर का ही हिस्सा है।'

हिंद महासागर में जामबेजी, दलजा महानद, सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र और इरावदी नदियों का पानी आकर मिलता है। महासागर की सतह का पानी आमतौर पर गर्म रहता है परन्तु दक्षिणी महासागर में अंटार्कटिका के करीब बर्फ से लबरेज एवं हिमखण्डों से भरपूर बहुत ही ठण्डा जल इस समुद्र में पाया जाता है। इस महासागर में जल-प्रवाह की दो प्रणालियां हैं जिनमें एक घड़ी की विपरीत दिशा में बहने वाली दक्षिणी भूमध्य-रेखीय जल-धारा, मोजांम्बिक धारा, पश्चिमी विंड ड्रिफ्ट, पश्चिमी ऑस्ट्रेलियाई धारा प्रमुख हैं जबकि मानसून के बहाव वाली उत्तरी प्रणाली की दूसरी जलधारा है जिसके माध्यम से मानसूनी हवाएं चलती हैं और मौसमी बरसात आती है। दक्षिणी-पश्चिमी मानसून हिंद महासागर से नमी सोख कर भारतीय उपमहाद्वीप और दक्षिण-पूर्वी एशिया में भारी बारिश करती है।

हिंद महासागर मध्य-पूर्व, अफ्रीका और पूर्वी एशिया

को यूरोप और अमेरिका से जोड़ने के प्रमुख समुद्री मार्ग प्रदान करता है। इस महासागर में पेट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पादों से भरे जहाजों का भारी यातायात रहता है। ज्ञात हो, फारस की खाड़ी और इण्डोनेशिया में हाइड्रो-कार्बन के बड़े-बड़े भण्डार स्थित हैं जहां के ऑफशोर क्षेत्रों में से साऊदी अरब, ईरान, भारत और पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया में इन उत्पादों का दोहन किया जा रहा है। एक अनुमान के अनुसार दुनिया के ऑफशोर तेल का 40 प्रतिशत उत्पादन हिंद महासागर से किया जा रहा है।

दक्षिणी महासागर : इस महासागर को दक्षिणी महासागर के अलावा अंटार्कटिक महासागर और दक्षिणी ध्रुवीय महासागर भी कहते हैं। यह महासागर दुनिया का नवीनतम और चौथा सबसे बड़ा महासागर है। **अंतरराष्ट्रीय जल सर्वेक्षण संगठन** ने सन् 2000 ई. में इस महासागर को परिसीमित करने का फैसला किया था और प्रशांत, अटलांटिक और हिंद महासागर की सीमाओं को घटा कर नए क्षेत्र को इस महासागर में जोड़ा गया था। परन्तु उक्त प्रस्ताव पर अभी तक कार्रवाई नहीं हुई। दक्षिणी महासागर अंटार्कटिका के तट से लेकर 60 डिग्री दक्षिणी अक्षांश तक फैला हुआ है। इस महासागर का कुल क्षेत्र 2,03,30,000 वर्ग किलोमीटर है तथा इसकी औसत गहराई 4,000 से 5,000 मीटर के बीच है, जबकि इसका सबसे गहरा स्थान **साऊथ सैंडविच ट्रैंच** है जिसकी गहराई 7,235 मीटर है।

हाल ही के वर्षों में समुद्र विज्ञान में हुए अनुसंधान महासागरों की जलधाराओं के प्रवाह पर केन्द्रित रहे हैं। पहले तो **एल नीनो** की वजह से उसके बाद **ग्लोबल-वार्मिंग** की वजह से ये अनुसंधान दुनिया के व्यापक हितों के लिए किए जा रहे हैं। इन्हीं अनुसंधानों से पता चला है कि महासागरों के जल की धाराओं के सिस्टम को दक्षिणी महासागर का **दक्षिणी-सर्कुलेशन** तय करता है। इसीलिए इसको एक अलग पारिस्थितिकी तंत्र अर्थात् इको-सिस्टम भी कहा जाता है। एक नए अध्ययन से पता चला है कि दक्षिणी महासागर के गहरे पानी में दक्षिणी सर्कुलेशन की वजह से इसके जल में जो उथल-पुथल वाला मिश्रण होता है उससे वैश्विक महासागर की धाराओं और जलवायु पर गहरा प्रभाव पड़ता है। दक्षिणी महासागर **ग्लोबल ऑवटर्निंग सर्कुलेशन** में एक निर्णायक भूमिका निभाता है। ग्लोबल ऑवटर्निंग सर्कुलेशन महासागरों के सतह के जल और गहरी जलधाराओं को सभी महासागरों में जोड़ने की प्रणाली है। यह पृथ्वी की जलवायु के निर्धारण के मौलिक तत्त्वों में से एक है। अंटार्कटिका के चारों ओर का स्थान ही एक ऐसा स्थान है जहां पर यह महासागर विश्वभर में महाद्वीपीय बाधाओं के बिना ही स्वतंत्र रूप से प्रवाह कर सकता है। इसलिए दक्षिणी सर्कुलेशन को ही दक्षिणी महासागर को परिभाषित करने के लिए ही इसका प्रयोग किया जाता है। दक्षिणी महासागर एक विशाल जलराशि है जो उत्तरी सीमा से दक्षिण में स्थित है। इस महासागर का औसत तापमान -2^0 सेंटीग्रेड से लेकर 10^0 सेंटीग्रेड के बीच रहता है। इस महासागर में दुनिया की सबसे बड़ी समुद्री जलधारा **'अंटार्कटिका सर्कमपोलर करंट'** प्रवाह करती है जो विश्व की सब नदियों से 100 गुणा ज्यादा यातायात को वहन कर सकती है।

दक्षिणी महासागर पृथ्वी पर सबसे ठण्डा और सबसे तेज हवाओं वाला स्थान तो है ही, यहां पर इस ग्रह के ताजे पानी का 60 प्रतिशत तक भण्डार भी मौजूद है। हाल ही में दक्षिणी महासागर में स्थित **वेडेल सागर** में किए गए अभियानों से पता चला है कि यहां समुद्री जीव-जन्तुओं की 700 से ज्यादा प्रजातियां मौजूद हैं जिनमें विशाल मांसाहारी स्पंज भी है। अटलांटिक महासागर के दक्षिण में स्थित वेडेल सागर का क्षेत्र पृथ्वी पर बचे हुए सबसे अक्षुण्ण पारिस्थितिकी तंत्रों में से एक है तथा वैश्विक सागर परिसंचरण में एक प्रमुख ईंजन है। बर्फ से ढका वेडेल सागर 28 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है और इसकी औसत गहराई 500 मीटर से लेकर 5,000 मीटर तक है। यह सागर अपने विशाल विविधता वाले समुद्री जीव-जन्तुओं के लिए प्रसिद्ध है। अब दुनिया में इस सागर की अविश्वसनीय जीव-विविधता को बचाने के प्रयास सुनिश्चित किए जा रहे हैं ताकि वेडेल सागर के विशाल और पूरी तरह से सुरक्षित समुद्री जीव-जन्तुओं और अन्य समुद्री संपदा को अक्षुण्ण रखा जा सके।

समुद्र विज्ञान के जानकारों का कहना है कि इस क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के जोखिम तो हैं ही, यहां के समुद्र में अम्लीकरण की प्रक्रिया भी बढ़ रही है। यह महासागर हमारे द्वारा उत्पादित कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस की एक तिहाई मात्रा को ग्रहण कर रहा है जिससे पृथ्वी के तापमान की वृद्धि की दर तो कम हो रही है परन्तु समुद्र के पानी का रसायन शास्त्र बदल रहा है। कार्बन डाइ ऑक्साड गैस महासागर के पानी के साथ प्रतिक्रिया करके कार्बोनिक एसिड बना रही है और इससे महासागर धीरे-धीरे ज्यादा अम्लीय बन रहा है। समुद्रों की तेजाबी प्रवृत्ति के चलते समुद्री जीव-जन्तुओं के जीवन को भी खतरा उत्पन्न हो रहा है। औद्योगिक क्रान्ति की शुरूआत से पहले की तुलना में अब महासागरों का जल 26 प्रतिशत अधिक अम्लीय हो गया है। अब तो यह आशंका भी व्यक्त की जा रही है कि सन् 2100 ई. तक इनमें 170 प्रतिशत तक अधिक अम्लीयता बढ़ सकती है। दक्षिणी महासागर के वायुमण्डल में अंटार्कटिका के ऊपर ओजोन परत का छेद भी पर्यावरणीय समस्या को बढ़ा रहा है। यह छेद ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन और हवाओं को प्रभावित करता है।

अंटार्कटिक प्रायद्वीप के चारों ओर पश्चिमी-दक्षिणी महासागर तथा पूर्वी-दक्षिणी महासागर के बीच बहुत बड़ा अंतर है। पश्चिमी अंटार्कटिका महासागर दुनिया के उन क्षेत्रों में से एक है जहां सबसे तेजी से गर्मी बढ़ रही है। इसकी वजह से यहां का समुद्री बर्फ तेजी से पिघल रहा है, परन्तु पूर्वी अंटार्कटिका में हाल ही के

वर्षों में समुद्री बर्फ में वृद्धि देखी गई है। यहां पर पैंगुइन और व्हेल मछलियां बड़े समुद्री जीव-जन्तु हैं जिनका पसंदीदा भोजन क्रिल्ल है, परन्तु मनुष्य ने इनको एवं छोटे-छोटे झींगा टाईप के समुद्री जीवों को अपनी खुराक में महज ओमेगा-3 की मात्रा बढ़ाने के लिए इस महासागर से दोहन कर लिया है। इससे पैंगुइन और व्हेल के जीवन-चक्र पर भी प्रतिकूल असर पड़ा है। इसके अलावा अटार्कटिका प्रायद्वीप के चारों ओर तेजी से हो रहे जलवायु परिवर्तन के कारण समुद्री बर्फ बहुत कम हो गई है जिससे समुद्री जीव बेतरह से प्रभावित हुए हैं।

आर्कटिक महासागर : यह महासागर उत्तरी गोलार्द्ध और आर्कटिक उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्र में स्थित विश्व के महासागरों में सबसे छोटा एवं उथला महासागर है। हालांकि, अंतरराष्ट्रीय जल सर्वेक्षण संगठन ने इस महासागर को एक महासागर घोषित किया है, परन्तु कुछ समुद्र वैज्ञानिक इसे केवल आर्कटिक सागर ही कहते हैं। यूरेशिया और उत्तरी अमेरिका महाद्वीपों से लगभग पूरी तरह से घिरा आर्कटिक महासागर साल भर आंशिक रूप से और सर्दियों में पूरी तरह से बर्फ से ढका रहता है। इस महासागर की सतह के तापमान तथा इसके जल की लवणता मौसमों के हिसाब से बदली रहती है। परन्तु पांच महासागरों में इसकी लवणता सबसे कम है और इसका कारण है यहां होने वाला कम वाष्पिकरण तथा साइबेरिया एवं कनाडा की नदियों व जल धाराओं के पानी का इस महासागर में प्रवाह का होना और आसपास के नमकीन पानी वाले समुद्रों के साथ सीमित संयोजन या बहार का होना है। परन्तु 50 मीटर की गहराई के पश्चात लवणता और तापमान दोनों गहराई बढ़ने के साथ-साथ बढ़ते हैं। महासागर में गर्मियों में बर्फ की सिकुड़न 50 प्रतिशत तक है।

आर्कटिक महासागर का बेसिन मोटे तौर पर वृत्ताकार है। इसका क्षेत्रफल 1,40,56,000 वर्ग कि.मी. है जो रूस के आकार जितना है। महासागर का समुद्र तट 45,390 कि.मी. है तथा यह यूरेशिया, उत्तर अमेरिका, ग्रीनलैंड और अन्य कई देशों से घिरा हुआ है। आर्कटिक महासागर में बाफिन बे, बेरिंट सागर, ब्यूफार्ट सागर, चुकची सागर, पूर्वी साइबेरियाई सागर, ग्रीनलैंड सागर, हडसन की खाड़ी, हडसन जलसंधि, कारा सागर, लेपटेव सागर, काला सागर और अन्य जल-राशियां भी इसके सहायक सागरों के रूप में सम्मलित हैं। ग्रीनलैंड सागर तथा लेब्राडार सागर के माध्यम से यह सागर **वेरिंग जलसंधि** के द्वारा प्रशांत महासागर और अटलांटिक महासागर से जुड़ा हुआ है। इस महासागर से सटे हुए देशों में रूस, नार्वे, आइसलैंड, ग्रीनलैंड, कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका हैं।

आर्कटिक महासागर के तटीय क्षेत्र में बढ़ी हुई **'आर्कटिक शेल्फ'** में कई महाद्वीपों के बढ़े हुए भाग हैं जिनमें कनाडा-आर्कटिक शेल्फ और रूसी महाद्वीप शेल्फ आदि हैं। साइबेरिया शेल्फ में बहुत बड़ी मात्रा में तेल और गैस के भण्डार मौजूद हैं। महासागर के पानी के नीचे की एक रिज- **'लोमोनोसोव रिज'** गहरे समुद्र के **'नार्थ पोलर बेसिन'** को दो समुद्रीय बेसिनों- यूरोशियन बेसिन और अमरेशियन बेसिन में विभक्त करती हैं। यूरेशियन बेसिन की गहराई 4,000 मीटर तक है। समुद्री गहराई को भ्रंश ब्लॉक, रिज, अगाध मैदानों, महासागर की डीप और घाटियों से चिन्हित किया जाता है। आर्कटिक महासागर की औसत गहराई 1038 मीटर है तथा इसका सबसे गहरा स्थान यूरेशियन बेसिन में **'लिटके डीप'** है जो 5,450 मीटर गहरा है।

इस महासागर में प्रशांत महासागर और अटलांटिक महासागर का जो जल प्रवेश करता है जिसको तीन जल-राशियों में बांटा जा सकता है। सबसे गहरी जलराशि को **'आर्कटिक बॉटम वाटर'** कहते हैं और यह धारा लगभग 900 मीटर नीचे प्रवाह करती है। इस जलराशि में विश्व के सभी महासागरों के जल का सघनतम जल होता है। इसका स्रोत आर्कटिक शेल्फ का जल और ग्रीनलैंड सागर का गहरा जल है। प्रशांत महासागर का जल बेरिंग संधि से आकर मिलता है। आर्कटिक का नीचे का जल अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसका बहाव अटलांटिक महासागर की **'अटलांटिक डीप वॉटर'** धारा के निर्माण में योगदान करता है। यह बहाव वैश्विक समुद्री धाराओं के प्रवाह और विश्व की जलवायु के संतुलन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

चतुर्भागात्मक हिमाच्छादन के प्रभाव से आर्कटिक महासागर पर एक ध्रुवीय जलवायु रहती है जिससे लगातार ठण्ड और अपेक्षाकृत कम वार्षिक तापमान होता है। सर्दियों की रातें ठण्डी और ध्रुवीय प्रभाव वाली होती हैं। मौसम स्थिर रहता है तथा आसमान भी साफ रहता है। जबकि गर्मियों में आधी रात तक निरन्तर दिन ही रहता है तथा मौसम नम और कोहरे से भरा धुंधला रहता है। यहां कमजोर चक्रवात के कारण बरसात भी होती है या बर्फ पड़ती है।

आर्कटिक महासागर में लुप्तप्राय समुद्री जीवों की प्रजातियां वालरस और व्हेल आदि हैं। वस्तुतः यह क्षेत्र एक **नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र** है। इसको अवरोधों एवं क्षति से उबरने में जिस परिवर्तन की जरूरत है वह बहुत धीमी गति से हो रहा है। आर्कटिक के जल में लायंन एवं मने-जेलीफिश प्रचुर मात्रा में पाई जाती है तथा बैंडेड गनेल भी इस समुद्र में मिलती है। इस महासागर में फाइटोप जैसे पौधों के अलावा अन्य पौधे बहुत कम हैं। फाइटोप इस महासागर का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं तथा वे नदियों के पोषक तत्त्वों और अटलांटिक की धाराओं से पोषक तत्त्व लेकर पनपते हैं। गर्मियों के दौरान जब इस महासागर पर सूर्य दिन-रात चमकता रहता है तो फोइटोप पौधों को प्रकाश संश्लेषण का भरपूर समय मिल जाता है। वे इस अवधि में जल्दी से पुनः ऊग आते हैं। परन्तु सर्दियों में उन्हें अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करना पड़ता है। इस महासागर में पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के विशाल भण्डारों के अलावा मैगनीज व अन्य बहुत से बहुमूल्य खनिज पदार्थ जमा हैं। इसके अलावा रेत और बजरी के टुकड़े, मछली, सील और व्हेल इस क्षेत्र में बहुतायात में मौजूद हैं।

यह बड़े क्षोभ का विषय है कि आर्कटिक का बर्फ पिघल रहा है और इसके वायुमण्डल क्षेत्र की ओजोन परत में भी एक छेद है जो मौसमानुसार घटता-बढ़ता है। महासागर की बर्फ पिघलने से ग्रह की सफेदी घट जाती है जिससे ग्लोबल-वार्मिंग की क्रिया बढ़ती है। अध्ययनों से पता चला है कि सन् 2040 ई. तक आर्कटिक बिना बर्फ से ढका हुआ महासागर बन सकता है। इसके बहुत ही दूरगामी दुष्परिणाम होंगे। ग्लोबल-वार्मिंग से बढ़े तापमान के कारण ध्रुवीय बर्फ पिघलकर आर्कटिक महासागर में मिल जाएगी जिससे वैश्विक समुद्री धाराएं प्रभावित होंगी और दुनिया की जलवायु गंभीर रूप से प्रभावित होगी। अतः अपने महासागरों को बचाने के लिए हम सबको प्रयास करने होंगे। हमें पृथ्वी से बढ़ते हुए प्रदूषण को घटाना होगा और प्राकृतिक संसाधनों के बेतहाशा तरीके से होने वाले दोहन को रोकना होगा। जल-स्रोतों में गंदगी एवं औद्योगिक निस्त्राव को डालने की प्रवृत्ति पर सख्ती से प्रतिबंध लगाना होगा ताकि वे प्रदूषक तत्त्व हमारे महासागरों में न पहुंच पाएं

* लेखक हरियाणा राज्य प्रदूषण बोर्ड के वरिष्ट एनवायरनमेंट इंजिनियर हैं।

Courtesy:

M/s Navodaya Infrastructure Nirman Pvt Limited

Shed No. 417, HSIIDC Industrial Estate, Sector 2,
SAHA, Distt Ambala, 133104,

Manufacturers of :

Many products for Civil Construction, Industrial Sheds,
Office Complexes and Panels for Baffle Ranges, FICS Panels,
SIFCON Panels, Cellular Foam Concrete Blocks,
Lead Free Concrete Blocks.

Mobile: 9876144568 | Email: rva_pkl@yahoo.co.in

राजेन्द्र डंगवाल

इकोलॉजी है जीवों के अन्तर्सम्बन्धों का विज्ञान

इस पृथ्वी पर जीवों के एक-दूसरे तथा उनके प्राकृतिक वातावरण के साथ संबन्धों के वैज्ञानिक अध्ययन को पारिस्थितिकी अर्थात् इकोलॉजी कहते हैं। जीवों की संरचना, उनका वितरण, उनका भार, संख्या तथा इकोलॉजी सिस्टम के भीतर एवं अन्य पारिस्थितिकी तंत्रों में जीवों की बदलती हालत ही किसी इकोलॉजिस्ट के अध्ययन के मुख्य मुद्दे होते हैं। पारिस्थितिकी तंत्र की प्रक्रियाएं-प्राथमिक उत्पादन से लेकर भूमि की संरचना, पोषक तत्त्व चक्र और उनकी तरह-तरह की निर्माण गतिविधि को एक पर्यावरण के माध्यम से उनमें ऊर्जा और भार को नियमित करती हैं। जैव विविधता पारितन्त्रों में प्रजातियों की किस्मों को ही संदर्भित किया जाता है। प्रजातियां आनुवंशिक रूप से भिन्न होती हैं तथा उनकी प्रक्रियाएं पारिस्थितिक विविधता की सहभागिताओं से समृद्ध होती रहती है।

पारिस्थितिकी एक अन्तर्विषयों का क्षेत्र है जिसमें जीव विज्ञान और पृथ्वी विज्ञान सम्मलित हैं। 'इकोलॉजी' अर्थात् 'पारिस्थितिकी' शब्द 1866 में जर्मन वैज्ञानिक अर्नस्ट हैकल द्वारा गढ़ा गया था। हिपोक्रेट्स और अरस्तु जैसे प्राचीन यूनानी दार्शिनिकों ने 'नेचूरल हिस्ट्री' पर अपने अध्ययन में पारिस्थितिकी की नींव रखी थी। परन्तु आधुनिक पारिस्थितिकी एक कठिन विज्ञान बन गई है जिसमें अनुकूलन और प्राकृतिक चयन पर विकासपरक अवधारणाएं आधुनिक पारिस्थितिक सिद्धांत के नींव के पत्थर हैं।

पारिस्थितिकी के दायरे में एक छोटी से कोशिका जैसे सूक्ष्म स्तर से लेकर बड़े ग्रहों के पैमाने जैसे इकोस्फीयर तक के अन्तर्संबंधों के स्तरों की एक व्यापक सारणी शामिल है। उदाहरण के लिए एक इकोसिस्टम में बहुत से व्यक्तियों की आबादी होती है परन्तु उसमें विशिष्ट पारिस्थितिक समुदाय भी बनते हैं। एक जंगल के अंतिम अनुक्रमिक चरणों की पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को लेने में हजारों वर्ष लग सकते हैं। जाहिर है, एक पारिस्थितिकी तंत्र के क्षेत्र बहुत भिन्न भी हो सकते हैं जो एक छोटे से लेकर एक विशाल क्षेत्र तक हो सकते हैं। एक अकेला वृक्ष वन पारिस्थितिकी तंत्र का वर्गीकरण करने के लिए बहुत कम है। परन्तु वह उस पर रहने वाले जीवों के लिए प्रासांगिक है। पत्ते का रस चूसने वाले जीव की जनसंख्या की कई पीढ़ियां एक एकल पत्ती की उम्र से अधिक उस पत्ते पर रह सकती हैं और प्रत्येक ऐसा एफीड़ जीव विविध बैक्टिरियल समूह को भी पोषित करता है। पारिस्थितिक समुदायों में संबंधों की प्रवृति को अलग से रहने वाली प्रत्येक प्रजाति के विवरण जानकर समझाए नहीं जा सकते हैं। क्योंकि उनके विषय में तब तक न तो आकस्मिक स्वरूप से बताया जा सकता है और न ही उनकी भविष्यवाणी की जा सकती है जब तक कि पूरे पारिस्थितिकी तंत्र का एकीकृत रूप से अध्ययन न कर लिया गया हो। फिर भी कुछ पारिस्थितिकी सिद्धांत सामूहिक गुणों का उस स्थान पर प्रदर्शन अवश्य करते हैं जहां उनके घटक अन्य सभी के गुणों से मेल खाते हों। उदाहरण के लिए मनुष्यों की आबादी की जन्म दर एक समय सीमा के भीतर वहां पैदा हुए व्यक्तियों की संख्या की व्याख्या अवश्य कर देती है।

पारिस्थितिकी को जीवों की परस्पर अन्तःक्रिया तथा पर्यावरण एवं जीवों के बीच पारिस्थितिकीय सम्बन्धों के आधार पर दो भौतिक भागों में विभक्त किया गया है-(1) स्व-पारिस्थितिकी : जिसमें एकाकी पारिस्थितिकी सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है तथा (2) समुदाय पारिस्थितिकी : जिसके अन्तर्गत वनस्पति समुदाय का उसके आवास के सम्बन्ध में अध्ययन किया जाता है। वह कार्यशील क्षेत्रीय इकाई जिसके अन्तर्गत किसी भी क्षेत्र में जीव तथा उसके भौतिक पर्यावरण के मधय पारस्परिक क्रिया होती है, 'पारिस्थितिक-तन्त्र' कहलाता है। 'पारिस्थितिक-तन्त्र' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 1935 में टान्सले ने किया था। उनके अनुसार पारिस्थितिक-तन्त्र एक गतिक तन्त्र होता है जिसकी संरचना दो भागों में होती है-(1) व्योम, सभी जीवों का समूह, वनस्पति तथा प्राणी-जो एक साथ एक इकाई के रूप में रहते हैं तथा (2) आवास या भौतिक पर्यावरण। विश्वस्तर पर सम्पूर्ण जीवमण्डल एक वृहद् पारिस्थितिक-तन्त्र होता है। किसी भी पारिस्थितिक-तंत्र में पदार्थ एवं ऊर्जा का निवेश होता है, जिसके द्वारा जैविक संरचना का निर्माण होता है। पारिस्थितिक-तंत्र से पदार्थ तथा ऊर्जा का निर्गमन भी होता रहता है ताकि तन्त्र में समस्थिति बनी रहे। इस तन्त्र की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं-

(1) पारिस्थितिक-तन्त्र की संरचना मुख्यतः तीन मूलभूत संघटनों से होती हैं- जैविक संघटक, अजैविक या भौतिक संघटक

(स्थल, जल, वायु) तथा ऊर्जा संघटक।

(2) पारिस्थितिक संघटक का योग एक कार्यशील क्षेत्रीय इकाई होता है जिसमें ऊर्जा तथा पदार्थों का नियमित निवेश तथा बहिर्गमन होता रहता है।

(3) पारिस्थितिक-तन्त्र के किसी एक संघटक में यदि प्राकृतिक कारणों से कोई परिवर्तन होता है तो दूसरे संघटक में होने वाले परिवर्तन से उसकी क्षतिपूर्ति होती रहती है, किन्तु यदि मानव के द्वारा औद्योगिक तथा अन्य क्रियाकलापों से कोई क्षति की गई हो तो है तो उसकी क्षतिपूर्ति सम्भव ही नहीं होती है।

अब यदि पारिस्थितिक-तन्त्र के घटकों पर विचार किया जाये तो हम पाते हैं कि जैव तथा अजैव इसके दो घटक हैं। अजैव घटक तापमान, वर्षा, धूप, मिट्टी, जल, पवन, स्थल खंडों का ढाल तथा किसी प्रदेश के जलाशयों की बनावट है तथा जैव घटकों में जल, ऑक्सीजन, कार्बन-डाइऑक्साइड, खनिज फास्फेट तथा नाइट्रेट आदि तत्त्व हैं। जैव घटकों के दो प्रमुख उत्पाद वर्ग हैं- उत्पादक तथा उपभोक्ता। उत्पादक वे हैं जो भौतिक पर्यावरण से अपना जीवन स्वयं बना लेते हैं। इन्हें स्वपोषित भी कहा जाता है। हरे पौधे प्राथमिक उत्पादक हैं, क्योंकि वे प्रकाश-संश्लेषण द्वारा अपना भोजन स्वयं बना लेते हैं। महासागरीय जल में पादप-पलवक भी प्राथमिक उत्पादक हैं। अन्य सभी जीव उपभोक्ता कहलाते हैं क्योंकि वे अपने आहार के लिए दूसरे जीवों पर आश्रित होते हैं। केवल शाकाहारी या पौधों के ऊपर आश्रित रहने वाले जीव प्राथमिक उपभोक्ता और जो दूसरे जन्तुओं को अपना आहार बनाते हैं उन्हें गौण उपभोक्ता कहते हैं। मनुष्य सर्वाहारी है क्योंकि वह पौधें तथा जन्तुओं दोनों से ही अपना भोजन ग्रहण करता है। उपभोक्ता का एक चौथा वर्ग भी है, जो पौधें और जन्तुओं के मृत तथा अपघटित ऊतकों को अपना भोजन बनाते हैं उन्हें विघटक कहतें हैं। जीवाणु, फंफूदी तथा दीमक विघटक जीव हैं। विघटक पदार्थ जैव पदार्थों को अजैव पदार्थों में बदल देते हैं तथा इस तरह चक्र पूरा हो जाता है।

पारिस्थितिकी पर्यावरण, पर्यावरणवाद का प्राकृतिक इतिहास अथवा पर्यावरण विज्ञान का पर्याय नहीं है बल्कि यह बारीकी से विकासवादी जीव विज्ञान, आनुवंशिकी और आचार विज्ञान से संबंधित है। जैव विविधता पारिस्थितिक कार्य को कैसे प्रभावित करता है कि वास्तविक समझ ही पारिस्थितकी अध्ययन में एक महत्त्वपूर्ण फोकस क्षेत्र है। इकोलॉजी का अध्ययन करने वालों को इसलिए निम्नलिखित का वर्णन करना होगा कि उनका क्या अर्थ होता है। जैसे जीवन प्रक्रियाएं और उनका अनुकरण करना, जीवों का वितरण और उनकी बहुतायात, पृथ्वी पर रहने वाले समुदायों के माध्यम से सामग्री और ऊर्जा के आन्दोलन, पारिस्थितिकी प्रणालियों के क्रमिक विकास तथा पर्यावरण के संदर्भ में जैव विविधता के वितरण और उनकी बहुलयता। इन मुद्दों पर आज भी सतत अध्ययन चल रहा है।

पारिस्थितिकी वस्तुतः एक मानव विज्ञान भी है। इकोलॉजी में जीव विज्ञान के संरक्षण से लेकर वैटलैण्ड की देखरेख, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन (एग्रो इकोलॉजी, कृषि, वानिकी, कृषि वानिकी और मत्स्य पालन), शहरों का नियोजन (शहरी पारिस्थितिकी), सामुदायिक स्वास्थ्य, अर्थशास्त्र, बुनियादी और व्यवहारिक विज्ञान तथा मनुष्यों के सामाजिक संबंध (मानव पारिस्थितिकी) के कई व्यवहारिक प्रयोग हैं। पारिस्थितिकी प्रणालियां जैव भौतिक फीडबैक के तंत्र और विकासवादी गतिकी को व्यवस्थित बनाए रखती हैं। ये प्रणालियां जीवन के कार्यों से लेकर महाद्वीपीय जलवायु, वैश्विक बायोजीवो कैमिकल चक्र, पानी को साफ करने, मिट्टी, भोजन, फाइबर, दवाओं, जमीन के कटाव नियंत्रण, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, आर्थिक या आंतरिक मूल्य की कई अन्य प्राकृतिक विशेषताओं के नियमन के माध्यम से प्राकृतिक पूंजी का उत्पादन करते हैं।

जैव-मण्डल- भारत सरकार द्वारा पारिस्थितिक-तंत्र की जैव-विविधता को बरकरार रखने के लिए 'जैव-मण्डल' का प्रारूप तैयार किया गया था। जैव-मण्डल की स्थापना के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

(1) पौधें, पशुओं एवं जीवाणुओं की विविधता तथा समन्वयता की सुरक्षा तथा पारिस्थितिकी के सन्तुलन को बनाये रखना और अन्य पर्यावरणीय विषयों पर अनुसंधान को प्रोत्साहन देना।

पूरे देश में जैव मण्डल की स्थापना हेतु 14 स्थानों को चुना गया है, जिनमें से 10 स्थानों पर इसकी स्थापना भी की जा चुकी है

Bimal
Truly International

BIMAL ALUMINIUMS PVT. LTD.

An ISO 9001:2006 Certified Company

Manufacturing and Exporting Dairy Equipments

35, Industrial Estate Phase, 2, Jagadhri, Haryana 135003

Ph. :093553 10258 Email : info@bimalindia.com, Web : www.bimalindia.in

तथा वे हैं-नीलगिरि, नन्दा देवी, नोकरेक, ग्रेट निकोबार, मन्नार की खाड़ी, मानस, सुन्दरबन तथा सिमिलीपाल डिब्रू-सैखोव व डेहांग-डेबांग।

पिछली पंचवर्षीय योजना में जैवमण्डल की स्थापना के क्षेत्र में कुछ खास बिन्दुओं पर विशेष धयान दिया गया था उनमें से कुछ प्रमुख हैं-

(1) पर्यावरणीय अध्ययन तथा अनुसंधान को प्रोत्साहन देना।
(2) प्रगति का नियमित मूल्यांकन
(3) इसके प्रति जनसाधारण में चेतना का विकास तथा
(4) प्रशिक्षण कार्यक्रमों का नियमित संचालन।

वन्य जीवों की सुरक्षा हेतु परियोजनाएं।

1. बाघ परियोजना-अप्रैल 1973 में **'बाघ परियोजना'** का आरम्भ हुआ। इस समय देश के 27 अभयारण्यों में यह परियोजना चल रही है। इसकी रूपरेखा भारतीय वन्य प्राणी बोर्ड तथा डब्लयू.डब्लयू.एफ. (वर्ल्ड वाईल्ड फंड फार नेचर) द्वारा तैयार की गई।
2. हाथी परियोजना-दांतों के लिए मारे जाने, प्राकृतिक आवास एवं भोजन की कमी के कारण हाथियों की संख्या घटकर केवल 500 रह गई थी। हाथियों के संरक्षण के लिए हाथी परियोजना एक करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता से बिहार के सिंहभूमि जिले में 7 दिसम्बर 1992 को शुरु की गई। भारत में एशियाई हाथियों की संख्या लगभग 25,000 है जो विश्व में इस प्रजाति के हाथियों की कुल आबादी का लगभग आधा है।
3. गिरिसिंह अभयारण्य योजना- एशियाई सिंह, या बब्बर शेर जो कभी भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी तथा मध्य क्षेत्रों में पाया जाता था, अब मात्र गुजरात के गिरि वन में ही मिलता है। प्राकृतिक आवास, भोजन की कमी तथा मानवीय सिंहों के हस्तक्षेप से गिरि सिंहों का अस्तित्व ही मिटने लगा था। 1972 में गुजरात सरकार ने इनके संरक्षण, सुरक्षा एवं सुधार के लिए केन्द्र सरकार के सहयोग से यह परियोजना आरंभ की।
4. लाल पांडा परियोजना- अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की सहायता से दुर्लभ लाल पांडा प्रजाति के हिमालय क्षेत्र में संरक्षण करने की परियोजना का आरम्भ 1996 में किया गया था। इस परियोजना के अन्तर्गत वनों में वृद्धि, लोगों को शिक्षित करना तथा लाल पांडा को संरक्षण प्रदान करने का कार्यक्रम है।
5. हिमालय कस्तूरी परियोजना-एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष 20 हजार कस्तूरी मृग शिकारियों द्वारा मारे जाते हैं। इस कारण हिमालय की चम्बा घाटी से लेकर दक्षिण तक मिलने वाली यह प्रजाति विलुप्त होने की ओर अग्रसर थी। अतः अन्तर्राष्ट्रीय प्रकृति और प्राकृतिक संसाधन संरक्षण संघ (आई.यू.सी.एन.) ने संकटग्रस्त हिरण कार्यक्रम के अंतर्गत इस योजना का आरम्भ किया गया है।
6. प्रोजेक्ट हंगुल-जम्मू-कश्मीर के दाचीग्रस्त राष्ट्रीय उद्यान में यह मासूम हिरण 'हंगुल' पाया जाता है। **'प्रोजेक्ट हंगुल'** 1970 में शुरु किया गया था। वर्ष 1995 में इनकी संख्या 290 थी।
7. मगर प्रजनन परियोजना-संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) की सहायता से 1975 में उड़ीसा में मगर प्रजनन तथा प्रबन्ध की परियोजना आरम्भ की गई। बाद में इस परियोजना का विकास उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बंगाल, तमिलनाडू, आंध्रप्रदेश, गुजरात, केरल, मधयप्रदेश, महाराष्ट्र, नागालैण्ड तथा अण्डेमान निकोबार में भी किया गया।
8. मणिपुर थामिल-1977 में इनकी संख्या मात्र 18 रह गई थी। इनको संरक्षण देने के लिए 1977 में ही मणिपुर थामिल परियोजना का आरम्भ किया गया था। यह मणिपुर के लोकटक झील के दक्षिण भाग **'केबुललभजोआ'** में पाया जाता है।

पर्यावरण व प्रदूषण

पर्यावरण उन सभी स्थितियों और प्रभावों का कुल योग है जो जीव समूह के जीवन तथा विकास पर असर डालते हैं। पर्यावरण के अन्तर्गत वायु, जल तथा भूमि सम्मिलित हैं। प्राकृतिक संसाधनों का भारी मात्रा में शोषण किये जाने तथा सह-उत्पादों तथा कचरे की विशाल अनियन्त्रित मात्रा से आज पर्यावरणीय संकट पैदा हो गया है। इससे न केवल मानव का अस्तित्व बल्कि समूची धरती पर जीवन खतरें में पड़ गया है। वायु, जल और मिट्टी, पौधे तथा जीव-जन्तु

प्राकृतिक पर्यावरण के साधन हैं जिनसे प्राकृतिक पूंजी का निर्माण होता है। इन संसाधनों का विवेकपूर्ण प्रबन्ध रचनात्मक तथा वास्तविक नियोजन की मांग करता है जिसमें मनुष्य की आवश्यकताओं तथा उन्हें पूरा करने की पर्यावरणीय क्षमताओं के बीच संतुलन कायम हो सके। अब हम प्रदूषण के कुछ प्रकारों पर चर्चा करेंगे-

वायु-प्रदूषण

वायु-प्रदूषण को वायु में ऐसे पदार्थों की उपस्थिति के रुप में परिभाषित किया जा सकता है जो मनुष्य और उसके पर्यावरण के लिए हानिकारक होते हैं। वायु प्रदूषण के स्रोत निम्नलिखित हैं-

1. मनुष्य द्वारा जलाये गये जीवाश्म ईंधन के घरेलू एवं अन्य प्रदूषण।
2. ऑटोमोबाइल निर्वातक पैट्रोल या डीजल के यानी धुंए का उर्त्सजन।
3. कल-कारखानों तथा विद्युतगृहों द्वारा वायु में छोड़े गए औद्योगिक प्रदूषण जैसे- सल्फर-डाईऑक्साइड, कार्बन-डाईऑक्साइड, कार्बन- मोनोऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, क्लोरीन, नाईट्रस-ऑक्साइड तथा अन्य ऑक्साइड इत्यादि।

वायु-प्रदूषण की समस्या निरन्तर विकराल रूप धारण करती जा रही है। उसकी विकरालता का अनुमान 1952 की लंदन स्मोग (स्मोक/फोग/स्मोग) की उस घटना से लगाया जा सकता है जब वह शहर पूरे पांच दिनों तक भूरे रंग के प्रकाश और रसायनिक चादर के लिपटा रहा था। उस दौरान लगभग चार हजार लोगों की मौत हो गई थी तथा असंख्य लोग श्वसनीशोध तथा ह्रदयरोग से पीड़ित हो गये थे। टोक्यो के उद्योगों से आज भी इतनी मात्रा में धुआं निकलता है कि फ्यूजी पर्वत मात्र 40 दिन के लिए दिखाई पड़ता है। अमेरिका के न्यूयार्क, ऐंजेल्स और कैलीफोर्निया शहर तो हमेशा वायु-प्रदूषण के परिणामस्वरूप धुंए एवं धुंध से घिरे रहते हैं।

हमारे देश भारत की स्थिति भी अनुकूल नहीं है। दिल्ली में गाड़ियों तथा औद्योगिक सयंन्त्रों से निकले धुंएं से आखें जलने लगती हैं और फेफड़े पर कालिख की खतरनाक महीन परत ढक जाती है। यहां वायु-प्रदूषण की वजह से प्रत्येक तीसरा व्यक्ति सांस से सम्बन्धित बीमारियों से ग्रस्त है। पिछले दो दशकों में ही दिल्ली में वायु-प्रदूषण में 75 प्रतिशत की बढ़ौतरी हुई है एवं डीजल से चलने वाले वाहने के लिए जिसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैट्रोल सी.एन.जी. का प्रयोग जरूरी करके कम किया गया।

मुम्बई तथा कोलकातावासियों के लिए भी स्थिति बेहतर नहीं है। वायु-प्रदूषण की दृष्टि से कोलकाता भारत का सबसे प्रदूषित शहर है। एक अनुमान के अनुसार कोलकाता शहर प्रतिदिन 1299 टन प्रदूषक तत्त्व वायुमंडल में छोड़ता है। इसीलिए अब इसे **'स्मोक सिटी ऑफ इंडिया'** कहा जाता है। खतरे की घंटियां दूसरे शहरों में भी बज रही है। कानपुर, नागपुर, जयपुर, लुधियाना और फरीदाबाद में से ऐसा कौन सा शहर है जहाँ के लोग अपनी मौत के रूप में वातावरण में 'साइलेन्ट किलर' का गुब्बार न छोड़ते हो?

जल-प्रदूषण

जल में बहुत से खनिज तत्त्व, कार्बनिक, अकार्बनिक पदार्थ तथा गैसें घुली रहती हैं। यदि जल में घुले पदार्थ आवश्यकता से अधिक हो जाते हों या कुछ ऐसे पदार्थ एकत्रित हो जाते हों जो शुद्ध जल में नहीं होते हैं तो ऐसी स्थिति में जल हानिकारक हो जाता है और तब इसे प्रदूषित जल कहा जाता है। जल का प्रदूषक मुख्यतः घरेलू सीवेज, औद्योगिक अपशिष्ट, कृषि में उपयोग किये जाने वाले रसायनिक खाद व कीटनाशक तथा बढ़ा हुआ तापमान है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर होने वाली महासागरीय दुर्घटनाएं भी जल को, मुख्यतः समुद्री जल को प्रदूषित करती हैं। यदा-कदा कतिपय देशों द्वारा परमाणुवीय कचरे को भी समुद्री जल में डाल दिया जाता है जिससे पर्यावरणीय खतरा पैदा हो जाता है। प्रदूषित जल के कारण स्वास्थ्य संबन्धी बहुत खतरे संभावित हैं जैसे- हैजा, पीलिया, पेचिश, टायफाईड, गैस्ट्रो-इन्ट्री जैसे-संचारित रोग प्रदूषित जल से ही फैलते हैं। औद्योगिक इकाइयों द्वारा जल-स्रोतों में फेंके गये पारे, सीसे, तांबे, जिंक, अन्य धातुओं और उनके ऑक्साइड अनेक शारीरिक विकृतियों को जन्म देते हैं।

धवनि-प्रदूषण

धवनि प्रदूषण भी पर्यावरण के लिए हानिकारक है। पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम 1986, भारतीय दंड संहिता, मोटर वाहन अधिनियम 1936 व 1989 तथा उद्योग अधिनियम 1951 में धवनि-प्रदूषण का उल्लेख किया जा चुका है। 90 डेसीबल से अधिक

ध्वनि का स्तर पर्यावरण की गुणवत्ता का तो ह्रास करता ही है, अधिक तेज ध्वनि से श्रवण-शक्ति का भी ह्रास होता है, नींद ठीक प्रकार नहीं आती, नाड़ी संबंधी रोग हो जाता है तथा रक्त-चाप की बीमारी भी हो जाती है।

भूमि-प्रदूषण

बाढ़ के पानी, रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, जीवाणुनाशकों तथा शाकनाशकों के अत्यधिक इस्तेमाल से मिट्टी की पारिस्थितिकी बदल गई है तथा इसमें इतनी विकृतियां आ गई हैं कि यह अपनी प्राकृतिक संरचना और उर्वरता को बनाए रखने के लिए आवश्यक तत्वों को भी खो चुकी है। विकृति की इस अवधारणा को भूमि-प्रदूषण कहा जाता है। भूमि-प्रदूषण मिट्टी में कैल्शियम, मैग्नेशियम, सल्फर, आयरन, तांबा, जिंक, बोरॉन, मैगनीज़ नाईट्रोजन तथा फॉस्फोरस जैसे तत्वों की गंभीर कमी पैदा कर देता है। इससे उत्पन्न विषाक्त अनाज, सब्जियों और फलों से मनुष्यों में स्वास्थ्य-संकट और मिट्टी में क्षारता बढ़ने आदि के विकार अनेक रूपों में सामने आते हैं। मार्च 1980 में कृषि मंत्रालय द्वारा लगाए गए अनुमानों के अनुसार देश के कुल 30 करोड़ 40 लाख हेक्टेयर भू-क्षेत्र में से 17 करोड़ 50 लाख भू-भाग ऐसा है जो पर्यावरण की समस्याओं से ग्रस्त है।

रेगिस्तानों का बढ़ना मानव के-कुकृत्यों की ही देन है, जो अधिक जुताई, अत्याधिक चराई, वनों का ह्रास, अनियोजित सिंचाई परियोजनाएं और वायु, जल तथा मिट्टी प्रदूषण की वजह से बढ़ रहे हैं। रेगिस्तान का विस्तार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें भूमि की उत्पादकता में कमी आती है। इसके अन्तर्गत वनों की कटाई, शुष्कता, अर्ध-शुष्कता, लगातार पानी भरा रहने और क्षारता तथा कटाव की वज़ह से भूमि के विकृत होने, व इसकी रसायनिक अनुक्रिया तथा संभावित घटकों की समस्याएं भी शामिल हैं।

रेडियोधर्मी-प्रदूषण

ऊर्जा के एक स्त्रोत के रूप में मनुष्य को नाभिकीय ऊर्जा का सहारा लेना पड़ रहा है। रेडियोधर्मी विघटन से बहुत सी विद्युत तरंगे निकलती हैं जो भौतिक दृष्टि से हानिकारक होती हैं। नाभिकीय विस्फोट के समय रेडियोधर्मी पदार्थ वायुमंडल की बाह्य परतों में प्रवेश कर जाते हैं जहाँ पर वे ठंडे होकर संबधित अवस्था में बूंदो का रूप ले लेते हैं तथा बाद में ठोस अवस्था में बहुत छोटे धूलकणों के रूप में वितरित होते रहते हैं। सभी नाभिकीय विस्फोटों द्वारा 5 प्रतिशत रेड़ियोधर्मी स्ट्रान्शीयम-90 मुक्त होता है तथा इससे जल, वायु तथा भूमि का प्रदूषण होता है। भारत रेडियोधर्मी कचरे के निपटान की सुविधा विकसित करने वाला विश्व का चौथा राष्ट्र है।

अम्ल वर्षा

मुख्यतः उद्योगों एवं यातायात के उपकरणों से निःसृत होने वाली कार्बन डाईऑक्साइड, नाईट्रसऑक्साइड और सोडियम ऑक्साइड गैसों का जलवाष्पों में प्रतिक्रिया करके सल्फयुरिक और नाइट्रिक अम्ल बनाना तथा ओस या वर्षा के रूप में धरती पर वापस आना अम्लीय वर्षा कहलाता है। यह पृथ्वी के समस्त प्राणी समुदाय के लिए घातक है।

इसी प्रकार हरित गैस प्रभाव भी पृथ्वी पर प्रदूषण की मात्रा को निरन्तर बढ़ाता जा रहा है। इन सारे प्रदूषणों से मुक्ति के लिए इको-मार्क, सीसा रहित पेट्रोल, इको-क्लब, पर्यावरणीय सुरक्षा क्लब आदि योजनाएं चलाई जा रही हैं। किन्तु प्रदूषण से मुक्ति के लिए आवश्यक है मानव-मन का संयमित तथा नियन्त्रित होना तथा उस द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का संयमित प्रयोग करना

---

*लेखक हरियाणा राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड में एनवायरनमेंट इंजीनियर और कैथल स्थित बोर्ड के रीजनल ऑफिस के रीजनल ऑफिसर हैं

RUCHIRA PAPERS

HIGH QUALITY PAPERS
FROM THE HEART OF HIMACHAL

SIGNATURE
WRITING & PRINTING PAPERS

- Kora
- Safeda
- Savera
- Karigar
- Sitara
- Gehua
- Mela
- Pahari

KRAFT
PACKAGING, DTY & POY PAPER

- Multani
- Maati
- Khadi

TARANG
MULTI-PURPOSE OFFICE PAPER

- Mint
- Lemon
- Ivory
- Sky
- Rose

ROZAANA
HIGH BRIGHT COPIER PAPER

- 70 Gsm
- 75 Gsm

SUGARCANE • WILD GRASS • WHEAT •

At Ruchira Papers, we take pride in innovating superior products with a consistent commitment to quality, to our community and to the environment. With 13 products across 3 premium ranges, we deliver a rich, bountiful landscape of multipurpose papers suitable for all printing, stationery, and packaging needs. From our lands, to your hands.

EARTH FRIENDLY PAPER
MADE FROM AGRO WASTE

REGD. OFFICE & WORKS
Himachal Pradesh - 173030
T: +91-80-53800897 / 53101892
E: info@ruchirapapers.com

ADMIN. OFFICE
Haryana - 135001
T: +91-1732-233799/233140
E: rplynr@ruchirapapers.com

DELHI OFFICE
New Delhi - 110048
T: +91-11-29226638/29226639
E: rpldelhi@ruchirapapers.com

www.ruchirapapers.com

नरेश कुमार शर्मा

बिजली-फिटिंग का ऑडिट बचाता है शोर्ट-सर्किट और आग की घटनाओं एवं प्रदूषण से !

आग के कई मामले ऐसे भी मिलते हैं, जहां इमारतों में शॉर्ट-सर्किट के चलते आग लगती है। कई औद्योगिक इकाइयां पुरानी इमारतों में स्थित हैं और उनमें अच्छे विद्युतीकरण कार्य और अग्निशमन प्रणाली की कमी है। नई इमारतों में तो संभवत: बिजली के काम को ठीक तरह से किया जाता है और लोक-निर्माण विभाग भी अनिवार्य रूप से राष्ट्रीय भवन कोड के तहत स्थापित भवनों के निर्माण के बाद एनओसी जारी करता है। कई मामलों में, आवासीय क्षेत्रों में एलपीजी के रिसाव के कारण आग लगती है। कई बार रबड़ की चादरों के कारण उस समय आग लगती हैं, जब लोग उन्हें ओवन से ऊपर सूखाते हैं। हाल ही में दिल्ली के मालवीय नगर में लगी भीषण आग रबड़ के गोदाम के पास पार्क किए गए रबड़ की सामग्री से भरे हुए एक ट्रक में लगी आग से लगी थी। उस आग को बुझाने के लिए जब 80 अग्नि-शमन गाड़ियों से भी बात नहीं बनी तो आग पर काबू पाने के लिए वायु सेना की सहायता ली गई थी। यह गोदाम मालवीय नगर के एक भीड़-भाड वाले आवासीय इलाके 'खिरकी एक्सटेंशन' में था। बहुत संकरी और भीड़ वाली गलियों में अग्नि शमन गाड़ियों का पहुंचना बहुत ही मुश्किल होने की वजह से वायु सेना की मदद ली गई। आग की उस घटना में जहां एक ओर ज्वलनशील रबड़ की सामग्री में आग लगना भयावह आग का एक कारण रहा, वहीँ तेज हवाओं की वजह से उस इलाके में तुरंत ही आग का फैलना दूसरा बड़ा कारण था। आग की उस घटना में सुरक्षा की दृष्टी से आसपास के इलाकों में तेरह इमारतों जिनमें एक स्कूल और एक जिम भी था, खाली कराया गया था।

औद्योगिक क्षेत्रों के चारों ओर ग्रीन बेल्ट स्थापित करने से इंडस्ट्रियल इकाइयों में लगने वाली आग की घटनाओं को रोका एवं कम किया जा सकता है। यदि ग्रीन-बेल्ट में लगातार कचरा फेंका जाता है, तो उस कचरे की वजह से उस क्षेत्र में आग लग सकती है। अत: औद्योगिक इकाइयों के आसपास अपशिष्ट को डंप नही करना चाहिए। फायर हाइड्रेंट एक व्यावहार्य विकल्प हैं, क्योंकि फायरमैन उनकी वजह से तुरंत ही पानी तक पहुंच पाते हैं। लेकिन कई जगहों पर, अग्नि हाइड्रेंट अतीत की बात बन गए हैं। शहरों में इन सुविधाओं को रखना बहुत जरूरी है, विशेषकर जहां बड़े ट्रैफिक ब्लॉक मौजूद हैं। बड़े उद्योगों, गोदामों से लेकर बहुत से शोरूम आमतौर पर, दोषपूर्ण विद्युत तारों के कारण आसानी से आग पकड़ लेते हैं। इन स्थानों में से अधिकांश में बिजली की आपूर्ति निर्बाध रूप से रहती ही है जो इनमें लगे उपकरणों में भी रात भर मौजूद होती है। बिजली के खराब सर्किट की वजह से इनमें आग लगने का खतरा हमेशा रहता है। शॉर्ट सर्किट से होने वाली आग की घटनाओं को रोकने का सबसे आसान एवं सुरक्षित तरीका समय पर इलेक्ट्रिक तारों का ऑडिट करवाना है। हमारे शहरों में बहुत सारी पुरानी इमारतें हैं जिनमें बिजली के तारों की टूट-फूट होती रहती है जिसके चलते वहां शॉर्ट-सर्किट की घटनायें भी बहुत होती हैं। ऐसी घटनाओं को रोकने का बस एक ही सुरक्षित तरीका उन बिजली के तारों का सम्पूर्ण ऑडिट करवाना या उनको पूर्णत: बदल कर अच्छी क्वालिटी के तारों की फिटिंग करवाना ही हो सकता है।

इलेक्ट्रिक तारों के शॉर्ट सर्किट होने से लगने वाली आग की घटनायें बहुत ही आम हैं जो कई मौतों का कारण बनती हैं और हर साल अरबों रूपये की संपत्ति इस तरह की आग में नष्ट होती है। शॉर्ट सर्किट होने के 4 प्रमुख कारण हैं जो इस तरह की दुर्घटनाओं का कारण बनते हैं। बिजली के प्रत्येक उपकरण का एक अनुमानित जीवन चक्र होता है। लिहाजा, हमें दोषपूर्ण और पुराने उपकरणों को त्याग देना चाहिए। यह भी तय है कि मुख्य रूप से केबल इन्सुलेशन एक निश्चित समय के बाद क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। अत: हमें केबल और तार की इन्सुलेशन की नियमित रूप से जांच करवानी चाहिए। उच्च ऊर्जायुक्त लैंप जबरदस्त गर्मी की मात्रा पैदा करते हैं। वैसे भी, आजकल कई तरह के फैंसी लैंपशेड और लाइटिंग- फिक्स्चर वाले उपकरणबाजार में आ रहे हैं, जो प्रमाणिक अग्नि-रोधी प्रमाणित सामग्री से नहीं बने होते हैं। ऐसे फिक्स्चर से सदैव बचें और सावधान भी रहें। इसी तरह अतिरिक्त कनेक्शन लेने लिए प्राय: हम एक्सटेंशन कॉर्ड का उपयोग लंबी अवधि तक करते हैं, जिससे उनके केबलों पर विद्युत् अतिभार अर्थात ज्यादा लोड पड़ता है। एक्सटेंशन कॉर्ड को अनुचित तरीके से बिछाने और बार-बार लपेटने एवं खोलने के कारण ये शीघ्र खराब हो जाते हैं। याद रखें, एक्सटेंशन तारों को अस्थायी उपयोग के लिए बनाया जाता है। उनके केबलों में शॉर्ट सर्किट होने का कारण और खतरा निरंतर बना रहता है। साथ ही निर्धारित क्षमता से अधिक उनका उपयोग करने से भी बचें। एक इलेक्ट्रिक पॉइंट पर मल्टी-प्लग लगाना बहुत खतरनाक हो सकता है। क्योंकि समानांतर प्रतिरोधकों के कानून के अनुसार वे सर्किट प्रतिरोध को कम करते हैं। इसके अलावा, ढीले संपर्कों के कारण यह आने वाली तारों को गर्म कर देता है, जिससे आग लग सकती है। किसी एक इलेक्ट्रिक पॉइंट पर किसी विशेष लाइन को कभी ज्यादा अधिभारित न करें। इस से भी आग लग सकती है।

---

* लेखक हरियाणा राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड में सहायक एनवायरनमेंट इंजीनियर है

UNITED TIMBER WORKS

We are manufacturers of :
Film Face Shuttering plywood

Village Pansara, Saharanpur Road,
Yamuna Nagar, Haryana 135001
M.: 9729250888 | Email: info@unitedtimberworks.com
Web: www.unitedtimberworks.com

शैलेन्द्र अरोड़ा

अनियोजित प्रक्रिया के शिकार हैं हमारे बदहाल शहर !

संयुक्त राष्ट्र संघ' का अनुमान है कि सन् 2030 ई. तक विश्व की कुल जनसंख्या में से 70 प्रतिशत से ज्यादा लोग शहरों में रहने लगेंगे। भारत को भी सन् 2030 ई. तक अप्रत्याशित दर से बढ़ने वाली अपनी जनसंख्या के 85 करोड़ लोगों के लिए शहरी ढांचा विकसित करना एक बड़ी समस्या नजर आ रही है। संयुक्त राष्ट्र के आंकलन के अनुसार भारत की शहरीकरण की वर्तमान दर से सन् 2050 ई. तक यहां के शहरों में 84.3 करोड़ लोग रहने लगेंगे। फिलहाल यहां करीब 31 प्रतिशत आबादी ही शहरों में रह रही है। इस रिपोर्ट के अनुसार ब्राजील, रूस, भारत और चीन अर्थात् 'ब्रिक' देशों में भारत में शहरीकरण की गति सबसे तेज है। मोदी सरकार ने तो देश में 'स्मार्ट सिटी' बनाने की पहल भी कर दी है।

भारत आगामी दशकों में किस तरह से अपनी शहरीकरण की प्रक्रिया को तय करेगा, यह देश के नीति निर्धारकों की सोच और रवैये पर निर्भर है। फिलहाल तो स्थिति यह है कि देश के अधिकांश शहरों में बदहाल सड़कें, उफनाते शहरी नाले, अवैध कॉलोनियां तथा सैनिटेशन की चरमराती नागरिक सेवाएं ही चहुंओर नजर आती हैं। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' के अनुमान अगले 20 वर्षों में भारत में तेजी से शहरीकरण होगा, जिससे सुदूर गांवों तक के लोग बड़ी संख्या में शहरों में आकर बसेंगे। जाहिर है, भविष्य की मांग को देखते हुए हमें ऐसे बड़े बदलावों के लिए पर्याप्त धन का इंतजाम करने, शहरों की शासन प्रणाली को ठीक करने, देशभर में व्याप्त हालिया क्षेत्रवार नीतियों को ठीक करने और शहरों के स्वरूप को बदलने की जरूरत है। फिलहाल यह देख लेते हैं कि आज हमारे शहरों की क्या दशा है।

यदि आज देश में कहीं पर भी मानसून की तेज बारिश आ जाए तो उन क्षेत्रों के हमारे शहरों की स्थिति इतनी बदहाल हो जाती है कि लोग त्राहि-त्राहि करने लग जाते हैं। शहरों की ड्रेनेज व्यवस्था चौपट हो जाने से पूरे शहर में जल भराव की स्थिति हो जाती है। जगह-जगह ठहरे हुए पानी में बदबू के अतिरिक्त मच्छर और रोग फैलाने वाले कई तरह के रोगाणु पनप जाते हैं जिससे लोगों में जानलेवा बीमारियां फैल रही हैं। प्लास्टिक की थैलियों तथा यहां-तहां बिखरा हुआ शहरी कचरा सीवर लाईनों में इक्ट्ठा हो जाता है जिससे सीवर लाईनें भी अवरूद्ध रहती हैं और बरसाती पानी लोगों के घरों में घुस जाता है। इतना ही नहीं, लोगों को पीने के पानी तक की किल्लत हो जाती है।

पेयजल की बात करें तो एकाध शहर को छोड़कर भारत के तमाम शहरों में पेयजल की किल्लत लगातार बनी रहती है। सेनिटेशन की दृष्टि से भी हमारे शहर बहुत पीछे हैं। जहां तक सीवर लाईनों के बिछाने तथा शहरों में सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट स्थापित करने का प्रश्न है, देश भर में 10 प्रतिशत शहर भी ऐसे नहीं हैं, जहां पर सभी नागरिकों को ये सुविधाएं मिलती हों। बिजली की किल्लत तो पूरे भारतवर्ष में है ही, लेकिन दूसरे दर्जे के शहरों में लगातार पावर कटों के चलते लोगों का जीवन बिल्कुल भी सकून भरा नहीं है।

'यू.एन. ऑफिस फॉर डिजैस्टर रिस्क रिडक्शन' (यूएनआईएसडीआर) का मत है कि इन्फ्रास्ट्रक्चर, इंस्टीट्यूशन और नियोजन प्रक्रियाओं के स्तरीय न होने से भारत के शहरों में बाढ़ का खतरा हो सकता है। देखा जाए तो बाढ़ की सबसे बड़ी वजह शहरों में लगातार हो रहा गैर-नियोजित शहरीकरण ही है। शहरों के खराब ढंग से हुए नियोजन और प्रबंधन से बाढ़ का खतरा काफी बढ़ जाता है। शहरीकरण के दबाव में लोग उन जगहों का भी इस्तेमाल करने लगते हैं जो कतई भी उपयुक्त नहीं होती हैं। यदि ऐसी जगहों को रहने के तौर पर या किसी निर्माण के लिए इस्तेमाल किया जाए तो प्राकृतिक दुर्घटनाओं के होने की पूरी-पूरी संभावनाएं होती हैं। परंतु भारत जैसे विकासशील देश में लोगों का शहरों की ओर आने का सिलसिला इतना तेज है कि उसे अब रोका नहीं जा सकता है। लोग शहरों में आकर ऐसे ही अनुपयुक्त स्थानों पर ही रहने लग जाते हैं। इससे एक तो शहर और कस्बे लगातार विस्तार ले रहे हैं, दूसरे नियोजित विकास न होने से इन शहरों का शहरी स्वरूप भी बदल रहा है। वे शहरों की अपेक्षा गंदी बस्तियां ज्यादा नजर आते हैं। इसी वजह से वहां पर बहुत सी पर्यावरणीय समस्याएं भी पनपती रहती हैं।

भारत में तेजी से हो रहे शहरीकरण से यहां के पर्यावरण पर बहुत ही घातक प्रभाव पड़ रहा है। दूर-दराज से रोजी-रोटी की तलाश में आने वाले लोगों को शहरों में जहां भी जगह मिलती है, वे वहीं पर ही रहना शुरू कर देते हैं। यही वजह है कि आज यहां के छोटे कस्बे बड़े नगरों में और बड़े नगर महानगरों में तब्दील हो रहे हैं। हालांकि गांवों के लोग बेहतर रोजगार, आधुनिक जनसुविधाएं और उज्ज्वल भविष्य की लालसा को लिए हुए ही शहरों की ओर पलायन करते हैं, लेकिन उन्हें उक्त सुविधाएं इतनी आसानी से नहीं मिल पाती हैं। इसका कारण यह है कि शहरों में भी नौकरी हो या रोजगार चहुंओर गलाकाट प्रतिस्पर्धा है। नतीजा यह होता है कि गांवों से आए बहुत से लोगों को अपना पारंपरिक काम-धंधा छोड़कर शहरों में चपड़ासीगिरी या दैनिक दिहाड़ी-मजदूरी तक करनी तक पड़ती है। उनके पास रहने के लिए होती हैं संकरी गलियों वाली गंदी झुग्गियां, झोपड़पट्टी, स्लम और अवैध गंदी कॉलोनियां।

हमारे देश में भविष्य को ध्यान में रखे बिना जो शहरी योजनाएं बनाई जा रही हैं उनमें हुए अनियोजित विकास के कारण पनप रहीं अवैध कॉलोनियों की वजह से पर्यावरण का ही नहीं लोगों के स्वास्थ्य और देश की छवि तक का भारी नुकसान भारत को उठाना पड़ रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के इतने वर्ष बाद भी हमारे अधिकांश शहरों में सीवर लाईनें तक नहीं हैं और जहां हैं उनमें पॉलीथीन और दूसरा शहरी कचरा भरने से वे सदैव जाम रहती हैं। बाढ़ की स्थिति होने पर ही उनको साफ कराने का अभियान चलाया जाता है। परन्तु, शहरों में सीवर लाईनों और नालों की सफाई करवाना भी एक बड़े भ्रष्टाचार को जन्म देता है। अब तक देश के शहरों की सीवर लाईनों और नालों की सफाई पर इतना धन खर्च हो चुका है कि उससे तो हम वहां नई सीवर लाईनें डलवाने के पश्चात बहुत सी धनराशि भी बचा सकते थे।

शहरीकरण की प्रक्रिया के बढ़ने से देश में वाहनों की खरीद में भी ज्यादा वृद्धि हुई है। नतीजतन ज्यादा डीजल और पेट्रोल फूंका जाने लगा है जिससे शहरों के वातावरण में वायु प्रदूषण लगातार बढ़ता रहता है। वायु प्रदूषण के कारण शहरी नागरिक भी लगातार बीमार पड़ते रहते हैं। उनमें श्वास, टी.बी. और स्नायु रोग सदैव पाए जाते हैं। इसी तरह शहरों के बीच से गुजरने वाले हमारे नदी-नाले आज इतने प्रदूषित हो गए हैं कि इन्हें देख कर यह लगता ही नहीं है कि कभी इनमें निर्मल जल धारा का प्रवाह होता था। हालांकि, नदी थी खेती के लिए, मछली के लिए और अन्य जलीय जीव-जंतु के लिए, न कि शहरी गंदगी को बहाने के लिए। ये पवित्र जल स्रोत अब गंदे नाले बन चुके हैं क्योंकि इनमें आजकल शहरी मल-जल और गंदगी ही बहती है। आज हमारे तमाम जलस्रोत, जिनमें नदी-नाले भी सम्मलित हैं, प्रदूषण से इतने त्रस्त हैं कि उनसे ही संक्रमण फैल रहा है। इसी संक्रमण से हमारे देश के शहरी लोग बीमार पड़ कर कुकरमुत्तों की मानिंद वृद्धि कर रहे अस्पतालों की शोभा बढ़ाते हैं। देश में शहरी प्रशासन के लिए एक बड़ी समस्या शहरी कूड़े-कचरे को निपटाने की है। आज तमाम बड़े शहरों में इक्ट्ठे हुए शहरी कूड़े-कचरे का निपटान करना एक बहुत बड़ी चुनौती है। कई बड़े शहरों में तो यह संभव है कि कुछ आरक्षित लैंडफिल क्षेत्र भी हों जहां शहरी कूड़े-कचरे को एकत्रित किया जाता हो, परंतु छोटे शहरों में शहरी कूड़े-कचरे को एकत्रित करके किसी एक या दो जगह पर डालना बहुत ही मुश्किल काम है। वैसे भी शहरी कूड़े-कचरे की वजह से पर्यावरण का नुकसान तो हो ही रहा है। इससे शहरी आबादी ही ज्यादा प्रभावित होती है और इन लोगों में संक्रामक रोग फैलते रहते हैं।

शहरों के लगातार हो रहे विस्तार से आस-पास के खेत, बाग, कुंए और तालाब तक शहरीकरण की जद में आ गए हैं। हमारे देश की आवासीय समस्या के चलते किसी भी शहर के पास से गुजरने वाली सड़क के आसपास के तमाम खेत, जंगल, तालाब आदि को वैध या अवैध तरीके से खरीद कर उस क्षेत्र को कंकरीट के जंगलों में बदला जा रहा है। देश के अधिकांश उभरते हुए शहर अब सड़कों के दोनों और बेतरतीब तरीके से बढ़ रहे हैं। हालांकि, यहां सुविधा के नाम पर न तो सार्वजनिक परिवहन है, न सुरक्षा, न बिजली, न पानी और न ही पक्की गलियां और न ही इनमें सीवर लाईनें मौजूद हैं। ऐसे शहर न केवल पर्यावरण में प्रदूषण को बढ़ा रहे हैं बल्कि इनमें सामाजिक और सांस्कृतिक प्रदूषण की गंभीर

समस्याएं भी पनप रही हैं।

किसी भी विकसित देश के शहरों को देख कर जब हम उनकी अपने शहरों से तुलना करते हैं तो हमें प्रत्येक मोर्चे पर शर्मसार होना पड़ता है। शहरीकरण के लिए जिन मुख्य जरूरतों की आवश्यकता है उनमें हम कहीं भी नहीं टिक पाते हैं। विकसित देशों में सुंदर एवं चौड़ी सड़कें और फुटपाथ, सस्ती सार्वजनिक परिवहन सेवा, अच्छे और हरियाली से भरपूर पार्क, नियोजित आवासीय एवं औद्योगिक कॉलोनियों के अलावा वहां पर सुदृढ़ नागरिक जन सुविधाएं मौजूद हैं, जो हमारे देश के किसी भी शहर में नहीं हैं। या यूं कहें कि भारत में उपरोक्त सभी सुविधाओं का अभाव है। इसका कारण यह है कि हमारे योजनाकारों, वास्तुकारों एवं इन्जिनियरों ने शहरों की योजना बनाते समय न तो भविष्य की संभावनाओं और न ही वर्तमान में आवश्यक जन सुविधाओं को ध्यान में रखा। यही वजह है कि देश के अधिकांश शहरों में भयानक भीड़, जबरदस्त ट्रैफिक जाम और जन सुविधाओं का टोटा है।

हमारे देश के वास्तुकारों, इन्जिनियरों और योजनाकारों ने जितनी भी शहरी योजनाएं बनाई हैं, एकाध को छोड़ कर, आज सबका बुरा हाल है। इसका कारण यह है कि हमारे अफसर अंधाधुंध कमाई के चक्कर में रहते हैं, इसीलिए वे बिल्डरों और ठेकेदारों से सांठगांठ करके योजनाओं का बेड़ा गरक कर देते हैं। वे तय मानकों की अनदेखी करके ठेकेदारों को फायदा पहुंचाते हैं। परिणामस्वरूप, तमाम शहरों की सड़कें थोड़े समय में ही जर्जर हो जाती हैं, पार्क उजड़ जाते हैं, पगडंडियां तक उखड़ जाती हैं और स्ट्रीट लाइटें नदारद मिलती हैं। परंतु उनके लिए किसी अफसर, कारपोरेटर, ठेकेदार और किसी कर्मचारी तक की किसी भी तरह की जवाबदेही तय नहीं की जाती है। सड़क इत्यादि टूटने पर अफसरों की दलील होती है कि बरसात होने से सड़क टूटी है। हालांकि, जनता को सब पता है। क्या देश के नागरिकों को अंदरखाने की बात का पता नहीं है? क्या विकसित देशों में बरसात नहीं होती है? यदि होती है तो फिर उनकी सड़कें क्यों नहीं टूटती हैं?

असल में, देश के महानगरों के नगर निगमों, शहरों की नगर परिषदों और अन्य शहरी निकायों में जितने भी इन्जिनियर और अफसर तैनात हैं, अधिकांश की स्थानीय ठेकेदारों और राजनीतिज्ञों से सांठगांठ रहती है। वे सभी मिलकर निर्माण योजनाओं में पलीता लगाते हैं और तय मानकों की अनदेखी करके पैसा कमाते हैं। शहरी सड़कों, पार्कों, सार्वजनिक स्थलों और पार्किंग के लिए आरक्षित स्थानों पर भी मिलीभगत से ही अतिक्रमण करवाया जाता है। तय बाजारी से मिले राजस्व को हड़पा जाता है। इतना ही नहीं, नगर निगमों के लिए मुकर्रर सफाई कर्मियों को शहरी सफाई की अपेक्षा नेताओं और ठेकेदारों के घरों पर तैनात किया जाता है जिससे केवल उन्हीं के घरों के आसपास ही सफाई देखने को मिलती है, शेष शहर गंदगी के ढेर में परिवर्तित होते रहते हैं। यही स्थिति शहरों के सौंदर्यकरण और हरियाली की परियोजनाओं की होती है। नगर निगमों एवं नगर परिषदों के तमाम माली और अन्य कारिन्दे अफसरों, नेताओं और ठेकेदारों के घरों पर ताबेदारी करते हैं जिससे शहरों के पार्कों, सावर्जनिक स्थलों और सड़कों के किनारे लगे पेड़ या तो सूख जाते हैं अथवा अवैध रूप से कटवा दिए जाते हैं।

नई दिल्ली और चंडीगढ़ जैसे शहरों के वास्तुकार विदेशी थे। नई दिल्ली के निर्माण की योजना एक अंग्रेज वास्तुकार **'सर एडवर्ड लूटियन'** तथा चंडीगढ़ के लिए एक फ्रेंच-स्वीश वास्तुकार **'ला कारबुजिए'** ने बनाई थी। हालांकि, बेंगलुरू, गांधी नगर, नोएडा, पुणे आदि भी योजनाबद्ध तरीके से विकसित शहर हैं। परंतु, इनमें भी कहीं न कहीं, कोई न कोई बड़ी कमी आज भी स्पष्ट नजर आती है जबकि नई दिल्ली के योजनाकार सर लूटियन ने 50 साल आगे की संभवनाओं को ध्यान रखकर ही इस शहर को नियोजित किया था। आज भी दिल्ली का लूटियन जोन का इलाका ही दिल्ली का सबसे खूबसूरत, सबसे कम भीड़ वाला और पर्याप्त चौड़ी सड़कों वाला इलाका है। इसी वजह से यहां पर कभी भी ट्रैफिक जाम नहीं होता है।

चंडीगढ़ के मौलिक नियोजन को देखें तो यह शहर भी बहुत सुंदर होने के साथ-साथ सभी जन सुविधाओं से परिपूर्ण है। हालांकि, अब इस शहर की

परियोजना के साथ भी खिलवाड़ किया जा रहा है। इस शहर के योजनाकार श्री ला कारबूजिए ने तो मूल रूप से इसके 30 सेक्टरों के लिए ही योजना बनाई थी जिसे आज बढ़ाकर 63 सेक्टर तक कर दिया गया है। परिणामस्वरूप, चंडीगढ़ के नए बसाए गए सेक्टरों में उतना खुलापन और हरियाली नहीं है जितनी की मूल रूप से बसाए गए चंडीगढ़ में है। चंडीगढ़ को गत वर्ष देश का सर्वश्रेष्ठ स्वच्छ और सुंदर शहर घोषित किया गया था। चूंकि यह शहर केंद्र शासित प्रदेश घोषित है और यहां पर पंजाब और हरियाणा राज्यों की भी राजधानियां हैं। लिहाजा, पंजाब और हरियाणा ने इसका फायदा उठाने के लिए दो नए शहर और बसा दिए हैं। पंजाब ने मोहाली तथा हरियाणा ने पंचकुला शहर को चंडीगढ़ के बिल्कुल साथ ही बसाया है। पंजाब का एक और शहर जिरकपुर भी चंडीगढ़ के साथ मिल चुका है। इसीलिए आज चंडीगढ़ लगभग चारों ओर से घिर कर एक बहुत विस्तृत शहर तो अवश्य हो गया है परंतु जो रौनक असल चंडीगढ़ में है वह दूसरे शहरों में नहीं है।

भारत सरकार ने सन् 2005 ई. में देश के 63 शहरों के आधुनिकीकरण के लिए 'जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन' के तहत एक बड़ी योजना आरंभ की थी। इस योजना के तहत 'ए' श्रेणी के 7, 'बी' श्रेणी के 28 और 'सी' श्रेणी के 32 शहरों में पुनर्विकास एवं नवीकरण के लिए शहरी बुनियादी ढांचे, जलापूर्ति, सेनिटेशन, शहरी ठोस कचरा प्रबन्ध, सड़क नेटवर्क, शहरी परिवहन और पुराने शहर के क्षेत्रों के पुनर्विकास की योजनाओं को लागू करना था। हालांकि, देश के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक ने इस योजना के लिए आबंटित धन के दुरूपयोग का मुद्दा उठाया है। कैग ने मिशन के पहले चरण में व्याप्त भ्रष्टाचार को रेखांकित भी किया है। परन्तु, केन्द्रीय शहरी विकास मंत्री श्री वैंकया नायडू का दावा है कि इस योजना के पहले चरण की खामियों से सबक लेकर अब उनका मंत्रालय मिशन के दूसरे चरण में देश में स्मार्ट शहरों का निर्माण कर रहा है। ज्ञात हो, योजना आयोग ने 66,084.65 करोड़ रुपये की इस योजना पर अपनी मुहर लगाई थी परन्तु सरकार ने 37,070 करोड़ रुपये आबंटित किए थे तथा 2011 तक 32,934 करोड़ रुपये की राशि ही जारी की गई थी। परन्तु मोदी सरकार के आने तक इस योजना पर लगभग 46,000 करोड़ रुपया खर्च किया गया है। हमारे देश में अब इस योजना का नाम बदल कर 'अटल मिशन फॉर रीज्यूनेशन एण्ड अर्बन ट्रांसफोरमेशन' अर्थात् ए.एम.आर.यू.टी रखा गया। केंद्रीय मंत्रीमण्डल ने देश भर में 100 स्मार्ट शहरों के विकास के लिए 48,000 करोड़ रुपये तथा ए.एम.आर.यू.टी. के लिए 50,000 करोड़ रुपये की धनराशि की मंजूरी दी है ताकि शहरों का कायाकल्प हो सके। जिस प्रकार चण्डीगढ़ भारत का सबसे सुनियोजित व सुन्दर तथा गांधी नगर दूसरा सबसे सुनियोजित शहर है, उसी तरह देश में कुछ ऐसे शहर भी हैं जो बहुत प्रदूषित हैं। उड़ीसा का सुकिण्डा और गुजरात का वापी शहर दुनिया के 10 सबसे ज्यादा प्रदूषित शहरों में सम्मलित हैं।

यदि हमें देश की छवि को विश्व में बेहतर बनाना है तो हमें न केवल अपने शहरों के स्वरूप को बदलना होगा बल्कि अपनी नागरिक जिम्मेदारियों का भी निर्वाह करना होगा। इन नागरिक जिम्मेदारियों में शहरी कूड़े-कचरे के निपटान में शहरी प्रशासन की मदद करने से लेकर नियोजित विकास में योगदान देना सम्मलित हैं। छोटे शहरों को अनियोजित विकास और अवैध कॉलोनियों से बचाना होगा और हरित शहरों की अवधारणा का मूल रूप में अंगीकार करना होगा। जिस प्रकार विदेशों में सेनिटेशन और निजी स्वच्छता का एक नागरिक कर्त्तव्य के तौर पर पालन किया जाता है, भारतवासियों को भी यह गुण अपने अन्दर विकसित करना होगा। इसी तरह शहरी योजनाओं से जुड़े अधिकारियों, योजनाकारों और कर्मचारियों को कर्त्तव्यनिष्ठा से काम करते हुए देश के भविष्य के शहरों का निर्माण करना होगा

* लेखक हरियाणा राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड में एनवायरनमेंट इंजीनियर और करनाल स्थित बोर्ड के रीजनल ऑफिस के रीजनल ऑफिसर हैं

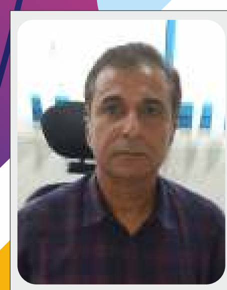

सतिंदर पाल सिंह बांगड़

भारत के पर्यावरण संरक्षण एवं मानव विकास में परिवार नियोजन कितना जरुरी ?

अब तक हम जनसंख्या नियंत्रण का वर्णन कर रहे थे, लेकिन जनसंख्या नियंत्रण का अर्थ क्या है, हम यह नहीं बता सके थे। वस्तुतः **'मानव जनसंख्या की दर को कृत्रिम रूप से कम करने की प्रक्रिया को ही जनसंख्या नियंत्रण कहते हैं।'** आमतौर पर जनसंख्या पर नियंत्रण सरकारी कार्यक्रम के तहत जन्म दर घटाकर किया जाता है। किसी भी देश में गरीबी को कम करने के लिए, पर्यावरण की चिंताओं के चलते और धार्मिक कारणों से जनसंख्या नियंत्रण के कार्यक्रम लागू किए जाते हैं ताकि लोगों का जीवन स्तर सुधरे और देश का विकास हो। भारत में आज भी 21.50 लाख महिलाएं प्रत्येक वर्ष गर्भ धारण से बचना चाहती हैं, लेकिन जहां ये रहती हैं वहां परिवार नियोजन के उपाय ही नहीं हैं। ज्ञात हो, ये महिलाएं गर्भ धारण करने योग्य महिलाओं के आयुवर्ग की महिलाओं की 15 प्रतिशत हैं।

भारत में केंद्र सरकार का स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय जनसंख्या नियंत्रण के लिए परिवार नियोजन से सम्बंधित तमाम तरह की सरकारी योजनाओं को तैयार करने एवं उन्हें लागू करने के लिए उत्तरादायी है। इस कार्यक्रम के लिए एक उल्टे लाल त्रिकोण के चिन्ह को परिवार नियोजन, गर्भनिरोधक सेवाओं और जनसंख्या नियंत्रण के विज्ञापन में एक प्रतीक के तौर पर प्रयोग किया जाता है। जिस तरह अंतर्राष्ट्रीय रेडक्रॉस संगठन ने अपनी चिकित्सीय सेवाओं के लिए रेडक्रॉस को एक प्रतीक के रूप में चुना है, उसी तरह भारत, घाना, गाम्बिया, जिम्बावे, मिस्र और थाईलैंड जैसे विकासशील देशों में कई चिकित्सा सम्बंधी दुकानों और क्लीनिकों के बाहर लाल त्रिकोण के प्रतीक को देखा जा सकता है। इस लाल त्रिकोण को यहां न केवल परिवार नियोजन या गर्भनिरोधक उत्पादों के लिए बल्कि प्रजनन एवं स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ावा देने वाले सरकारी संदेशों तथा जनसंख्या नियंत्रण के विज्ञापन के तौर पर प्रचलित किया गया है। यह चिन्ह कंडोम, डायाफार्म, स्पर्मीसाइडल-जैल, कॉपर-टी आदि पर भी अंकित किया जाता है।

लाल त्रिकोण चिन्ह का सबसे पहले प्रयोग भारत के परिवार नियोजन अधिकारी श्री दीप त्यागी उर्फ धर्मेंद्र त्यागी ने सन् 1960 ई. के दशक में किया था। बुनियादी प्रतीक में कई बदलाव करने के बाद ही मौजूदा लाल त्रिकोण का चिन्ह विकसित हुआ था। घाना में इस प्रतीक के नीचे **'लाईफ च्वाइसिस'** और **'फेमिली प्लानिंग : बेटर लाइफ'** अर्थात् परिवार नियोजन से बेहतर जीवन प्राप्त हो सकता है जैसे वाक्यांश लिखे जाते हैं। विश्व में सन् 1960 और 1970 ई. के दौरान जनसंख्या नियंत्रण आंदोलन सक्रिय हुआ था, उस समय तेजी से बढ़ती जनसंख्या को लेकर बहुत विचार विमर्श के बाद दुनिया के कई देशों ने परिवार नियोजन और प्रजननात्मक स्वास्थ्य में सुधार के लिए कई कार्यक्रम चलाए थे, परंतु 1980 के दशक में जनसंख्या नियंत्रण के हिमायतियों तथा महिलाओं के अधिकारों और उनके स्वास्थ्य सम्बंधित मुद्दों के समर्थकों, जिनका दृष्टिकोण मानवीय अधिकारों पर आधारित था, के बीच काफी तनाव हुआ जिससे जनसंख्या नियंत्रण की नीतियों में महत्त्वपूर्ण बदलाव किए गए। इन परिवर्तनों में महिलाओं को स्वैच्छिक रूप से अपना परिवार नियोजित करने की स्वतंत्रता देना था।

स्वैच्छिक परिवार नियोजन एक ऐसा कार्यक्रम है, जिसमें किसी भी तरह के मानवाधिकार के हनन का प्रश्न ही नहीं उठता है। परिवार नियोजन का लक्ष्य केवल जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाना नहीं है, बल्कि इससे गरीब लोगों के अधिकारों, न्याय और समानता को भी सुनिश्चित करना

आसान होता है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि महिलाओं में शिक्षा का स्तर बढ़ने के पश्चात ही यह कार्यक्रम स्वतः सफल हो सकता है। स्वैच्छिक परिवार नियोजन जनसंख्या नियंत्रण के साथ-साथ महिलाओं के बेहतर स्वास्थ्य और उनके विकास को बढ़ावा देता है। सही जानकारी और उचित स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच न होने से विकासशील देशों की लगभग 22 करोड़ महिलाओं को प्रति वर्ष अनचाहा गर्भ धारण करना पड़ता है। उपरोक्त के अतिरिक्त परिवार नियोजन के दुष्प्रभाव और इस पर होने वाले खर्च की गलत धारणाओं की भी वे शिकार होती हैं। यदि समय रहते इन समस्याओं को सुलझा लिया जाए तो तकरीबन 6 करोड़ अनचाहे गर्भ, 80 से 90 हजार मातृत्व मृत्यु और करीब 10 लाख बच्चों की असमय मृत्यु को प्रति वर्ष रोका जा सकता है। स्वैच्छिक परिवार नियोजन कम खर्चीला तो है ही, यह गरीबी के उन्मूलन में सहायता करने वाला कार्यक्रम भी है। इस नीति के तहत महिलाओं को स्वास्थ्य सम्बंधी मानवाधिकार, परिवार को बढ़ाने के बारे में निर्णय लेने की स्वतंत्रता और स्वायतता सहज रूप में ही मिल जाती है।

बांग्लादेश और ईरान में स्वैच्छिक परिवार नियोजन को अपनाकर जनसंख्या नियंत्रण के अच्छे परिणाम प्राप्त किए हैं। बांग्लादेश में प्रायोगिक तौर पर शुरू में मात्र एक जिले में ही इस नीति को लागू किया गया था। वहां से मिली सफलता के बाद जब इसे पूरे देश में लागू किया गया तो उसके संतोषजनक परिणाम मिले। स्वैच्छिक परिवार नियोजन से उन सामग्रियों और दवाओं का प्रयोग बढ़ा, जिनसे परिवार नियोजन आसान हो जाता है। प्रजनन दर कम होने से परिवारों की कमाई भी बढ़ी। ईरान ने भी इस्लामिक देश होते हुए इस कार्यक्रम को लागू किया और गुणवत्ता वाली परिवार नियोजन सामग्री और दवाईयां देश भर में वितरित की, जिससे वहां पर शिशु जन्म दर में बहुत कमी आई और जनसंख्या वृद्धि पर काफी रोक लगी। नीदरलैंड अथवा हॉलेंड, बैल्जियम और जापान जैसे देशों में जनसंख्या का घनत्व विश्व में सर्वाधिक होते हुए भी वहां के लोगों का जीवन स्तर काफी उच्च है। इसका कारण वहां के नागरिक हैं जो कार्यकुशल और लग्नशील होने के साथ-साथ अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए सदैव कृतसंकल्प रहते हैं। वे लोग अपनी कार्यक्षमता से अपने देश के निर्माण एवं विकास में भरपूर योगदान करते हैं। यही कारण है कि इन देशों में तमाम तरह की सुख सुविधाएं मौजूद हैं। इन देशों ने अपने नागरिकों को न केवल शिक्षित किया बल्कि उन्हें बेहतर मानव संसाधन के तौर पर भी विकसित किया है, जबकि भारत की स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है।

हमारे देश में आजादी के बाद 68 वर्ष बीत जाने के बाद भी आधे बच्चे तो प्राथमिक शिक्षा पाने से ही वंचित हैं, जिनमें लड़कियों की संख्या लड़कों से कहीं ज्यादा है। देश में मानव संसाधन विकास की गति इतनी धीमी है कि उसका राष्ट्र निर्माण में अभिष्ट योगदान नहीं मिल पा रहा है। बहुत से विकासशील देशों ने 21वीं सदी में पहुंचने के बाद जहां शिक्षा और मानव संसाधन के क्षेत्र में अपार सफलता प्राप्त कर ली है, वहीं भारत अभी भी निरक्षरता के चंगुल से बाहर निकल पाने में अपने आपको असमर्थ और असफल पा रहा है। जाहिर है, जिस देश में लगभग आधी जनसंख्या अनपढ़ एवं अनुशासनहीन तथा बेरोजगार भी हो तो उस देश के लोगों का जीवन स्तर कैसे ऊपर उठ सकता है?

विश्व प्रसिद्ध जनसंख्या विशेषज्ञ एवं अर्थशास्त्री प्रोफेसर जूलियन एल साइमन का मत है कि मानव संसाधन के तौर पर विकसित नागरिक अपने देश के

संसाधनों पर बोझ नहीं बनते हैं, बल्कि कुशल, योग्य, प्रतिभा सम्पन्न एवं धैर्यशील युवा शक्ति तो किसी भी देश की मूल्यवान धरोहर बन जाती है। प्रोफेसर साइमन का तो यहां तक कहना है कि ज्यादा लोग होंगे तो वे ज्यादा संसाधन भी बन सकते हैं, क्योंकि व्यक्ति केवल एक उपभोक्ता ही नहीं, वह एक उत्पादक भी होता है। इसीलिए यह कहा जा सकता है कि किसी देश का असली मानव संसाधन तो वहां के योग्य व्यक्ति ही हो सकते हैं।

भारत जैसे ज्यादा जनसंख्या वाले देश में गरीबी के चक्रव्यूह में फंसा परिवार न तो बच्चों की पढ़ाई के अवसर प्रदान कर पाता है और न ही उनके समुचित आहार की व्यवस्था ही। कुपोषण, निरक्षरता, बेरोजगारी, बीमारी और असामयिक मौत के चक्कर में पीढ़ियों से फंसा गांव और शहर का मजदूर तथा निम्न वर्ग का व्यक्ति जिंदगी के तमाम अवसरों से वंचित हो जाता है। इस चक्र को तोड़ पाने में देश की मौजूदा व्यवस्था और समाज अभी तक सफल नहीं हो पाया है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की ताजा रिपोर्ट में भारत पर आरोप लगाया गया है कि तकनीकी ज्ञान और बेहतर कार्यकुशलता के अभाव में न केवल देश की अर्थव्यवस्था कमजोर है, बल्कि यहां से निर्यातित वस्तुओं की गुणवत्ता भी विश्वस्तरीय नहीं है। इस रिपोर्ट के अनुसार अधिकांश भारतीय युवकों, विशेषकर ग्रामीण युवकों को बेहतर तकनीकी ज्ञान और प्रशिक्षण न मिलने से देश में बेरोजगारी की समस्या बढ़ी है। उपरोक्त कारणों के चलते ही भारत में **'बेगारी'** जैसी कुप्रथा में भी वृद्धि हुई है। जनसंख्या के क्षेत्र में जिस गति से हमने प्रगति की है, काश! आर्थिक विकास, ज्ञान-विज्ञान, कारीगरी और कौशल में भी हम ऐसी प्रगति कर पाते तो कितना अच्छा होता। यदि ऐसा होता तो अब तक हम विश्व में अति विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में होते।

'वर्ल्डवॉच' नामक संस्था की ताजा रिपोर्ट के अनुसार इस शताब्दी के मध्य तक भारत की जनसंख्या विश्व में सबसे अधिक 1.52 अरब हो जाएगी, जबकि चीन की आबादी सन् 2050 ई. तक भारत से कम लगभग 1.50 अरब तक ही पहुंच पाएगी। भारत की आबादी में प्रत्येक वर्ष सिंगापुर की आबादी से 18 गुणा ज्यादा लोग जुड़ जाते हैं, जो हमारे अविवेक, अज्ञानता और अदूरदर्शिता का ही परिणाम है। विश्व की जनसंख्या में भारत का छठा भाग है, लेकिन दुनिया की कुल अनपढ़ जनसंख्या में एक तिहाई लोग भारतीय हैं। देश के 65 प्रतिशत भारतीय नागरिकों को अनिवार्य और जीवन रक्षक औषधियां भी मयस्सर नहीं होती हैं। परिणामस्वरूप, इन लोगों को अस्वस्थ परिस्थितियों में अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता है

* लेखक हरियाणा राज्य प्रदूषण बोर्ड के वरिष्ट एनवायरनमेंट इंजिनियर हैं।

जटिल प्रक्रियाओं से किया जाता है संकर फलों का विकास

सोनिया सिंह

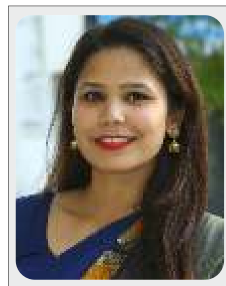

प्रगति हाडा

प्राकृतिक तौर पर प्राप्त फलों में सुधार के लिए विश्व के कई शोध संस्थानों और विश्वविद्यालयों में अनुसंधान कार्य चलाए जा रहे हैं। इन शोध कार्यों का मुख्य उद्देश्य फलों के आकार, रंग, गुणवत्ता आदि में सुधार करना है। वैज्ञानिक इन सुधारों के लिए चयन एवं संकरण आदि कई विधियों का उपयोग करते हैं। संकरण में मुख्यतः दो या अधिक जनकों का संकरीकरण करते हैं और इससे जो संतति बनती है, वह गुणों में पैतृक जनकों से बेहतर होती है। इसी संतति को 'संकर' कहते हैं। संकरण द्वारा वैज्ञानिकों ने विभिन्न फलों की हजारों 'संकर' किस्में विकसित की हैं। विश्व में कुछ फल ऐसे भी हैं, जो प्राकृतिक तौर पर तो विद्यमान थे ही नहीं, परंतु वैज्ञानिकों ने उन्हें संकरण द्वारा विकसित किया है। इस आलेख में इन्हीं कुछ हाइब्रिड अर्थात् संकर फलों के बारे में चर्चा की गई है।

प्रकृति ने हमें तोहफे के रूप में कई प्रकार के फल प्रदान किए हैं। वैज्ञानिकों ने इन को जलवायु-विशेष में उगाए जाने की प्रकृति के अनुसार वर्गीकृत किया है जैसे शीताष्ण जलवायु के लिए सेब, नाशपाती खुबानी, आलूबुखारा, आड़ू आदि; उपोष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए अनार, लीची, लोकाट, नीबूवर्गीय फल आदि एवं ग्रीष्म कटिबंधीय जलवायु के लिए आम, केला, अमरूद, नारियल आदि फलों में वर्गीकृत करके उन पर शोध किया है। प्रकृति में मिलने वाले प्रत्येक फल में उनके अपने-अपने गुण होते हैं। फलों को लोग उनके स्वाद तथा उनमें मौजूद औषधीय गुणों के लिए विविध एवं आकर्षक रंगों में उगाते हैं।

सभी चमकीले रंग के फलों और सब्जियों में एंटीऑक्सिडेंट होते हैं, ये यौगिक हमारे शरीर की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्राकृतिक रूप से कई बैंगनी रंग के खाद्य पदार्थों में एक निश्चित एंटी-ऑक्सिडेंट होता है जिसे एंथोसाइनिन कहा जाता है। फलों में मौजूद एंथोसायनिन, कैरोटीनॉयड, फ्लेवोनॉयड, विटामिन 'सी' आदि कई संघटक मनुष्य के शरीर को कई घातक रोगों जैसे हृदयघात, मधुमेह आदि से बचाते हैं। अतः फलों को **'संरक्षी भोज्य'** की श्रेणी में रखा गया है। इसीलिए, आहार विशेषज्ञों ने प्रत्येक व्यक्ति को संतुलित आहार में प्रति दिन कम से कम 120 ग्राम फल शामिल करने की सलाह दी है। आइए इस आलेख में हम कुछ संकर फलों के विवरणों को विस्तार से बताने का प्रयास करते हैं।

रंगपुर (Rangpur)

इसे रंगपुर लाइम, मैंडरिन लाइम या लेमांडिंन के नाम से जाना जाता है। यह संतरे सिट्रन रेटिकुलेटा एवं सिट्रन या सिट्रन्ज़ मेडिका के संकरण से विकसित संकर फल है। इसके फल अत्यधिक अम्लीय होते हैं, जिनका छिलका एवं गूदा नारंगी जैसा होता है। इसे लाइम के स्थान पर प्रयुक्त किया जा सकता है, परन्तु इसके नाम के साथ लाइम जोड़ना सरासर गलत है, क्योंकि इसके गुण लाइम से बहुत कम मिलते हैं। बहुत से देशों में इसे शोभाकारी पौधे के रूप में गमलों में या घरों की छतों पर उगाते हैं। मूलवृंत के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है।

टैंजेलो (Tangelo)

टैंजेलो सिटंस रेटिकुलेटा × सिटंस मेक्सिमा × सिटंस पेराडिसी डैंसी टेंजेरिन एवं डंकन ग्रेप फ्रूट का संकर फल है। अर्थात टेंजेलो, सिट्रस × टेंजेलो, सिट्रस रेटिकुलाटा किस्म

का एक सिट्रस हाइब्रिड फ्रूट है। इन में मैंडरिन ऑरेंज या टेंजेरीन और सिट्रस मैक्सिमा किस्म के पोमेलो या ग्रेपफ्रूट होते हैं। इसका विकास वाल्टर स्विंगल द्वारा 1911 में किया गया था। श्री डब्ल्यू टी स्विंगल संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग के वैज्ञानिक थे और उन को इस हाइब्रिड फल की किस्मों को बनाने का श्रेय दिया जाता है।

टैंजेलो, टेंजेरिन से आकार में बड़ी एवं रसीली होती है। इनका छिलका नारंगी से ढीला होता है, अतः इन्हें छीलना काफी आसान है। चूंकि, इस फल के तने पर एक निप्पल होता है, अत: इन्हें नारंगी से अलग आसानी से पहचाना जा सकता है। इसकी कुछ प्रमुख किस्में हैं ऑरलैंडो, हनीवेल एवं मिन्नियोला। जल्दी परिपक्व होने वाला ऑरलैंडो टैंगेलो अपनी समृद्धता, हल्के और मीठे स्वाद, बड़े आकार, विशिष्ट जोशपूर्ण गंध, और एक विशिष्ट घुंडी के बिना फ्लैट-गोल आकार के लिए विख्यात है। ऑरलैंडो टेंजेलो के फल नवंबर के मध्य से फरवरी की शुरुआत तक उपलब्ध होते हैं। टेंजेलो की उत्पत्ति एक डंकन अंगूर और एक डेंसी मंदारिन के बीच एक क्रॉस के रूप में हुई थी। ऑरलैंडो टैंगेलोस को अधिक ठंड-सहिष्णु किस्मों में से एक के रूप में मान्यता प्राप्त है।

मिन्नियोला (Minneola Tangelo)

मिन्नियोला जिसे हनीबेल के रूप में भी जाना जाता है, टेंजेरीन और एक अंगूर के बीच एक क्रॉस है जिसे 1931 में ऑरलैंडो में संयुक्त राज्य अमेरिका के बागवानी अनुसंधान केंद्र

द्वारा जारी किया गया था। इसका नाम फ्लोरिडा के मिन्नियोला के नाम पर रखा गया है। अधिकांश मिन्नियोला टेंजेलोस की विशेषता एक स्टेम-एंड नेक है, जो फल को बेल के आकार का बनाता है। इस वजह से, इसे उपहार फल व्यापार में हनीबेल भी कहा जाता है, जहां यह सबसे लोकप्रिय किस्मों में से एक है। मिन्नियोलास और हनीबेल्स दोनों आमतौर पर काफी बड़े, आमतौर पर 3.5 इंच व्यास के और मीठे फल होते हैं। परिपक्व होने पर इनके छिलकों का रंग काफ़ी चमकदार लाल-नारंगी रंग का हो जाता है। मिन्नियोला का छिलका अपेक्षाकृत पतला होता है, जबकि हनीबेल का छिलका थोड़ा मोटा होता है। मिन्नियोला और हनीबेल टेंजेलो दोनों आसानी से छीले जा सकते हैं। दोनों ही मीठे एवं तीखे रस के साथ बहुत रसदार फल होते हैं।

ब्लड लाइम (Blood Lime)

ब्लड लाइम, रैड फिंगर लाइम एवं ईलांडे मेंडेरिन का संकर फल है। इसका विकास एक ऑस्ट्रेलियाई संघीय सरकारी एजेंसी राष्ट्रमंडल वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान संगठन ने लवणरोधी मूलवृंत की खोज में किया था। ऑस्ट्रेलिया के बाजारों में ब्लड लाइम की पहली व्यावसायिक फसल जुलाई 2004 में दिखाई दी थी और इसमें मौजूद कुछ व्यावसायिक गुणवत्ता के कारण अब इसे निर्यात भी किया जाने लगा है। ब्लड लाइम अधिकांश लाइम से छोटा, जो लगभग 4 सेमी लंबा और 2 से.मी. व्यास का तथा सामान्य से कुछ अधिक मीठा होता है। इसके फल सर्दियों में अंडे के आकार के होते हैं तथा गूद्दा लाल-संतरी रंग का, जबकि छिलका लाल रंग का होता है, जिसे फल सहित खाया जा सकता है। इसके पौधे के छोटे एवं कांटेदार होते हैं।

ओरेंजेलो (Orangelo)

यह संकर फल, ग्रेपप्रूफट एव नारंगी स्वीट ऑरेंज के क्रॉस से विकसित किया गया है। ओरेंजेलो एक हाइब्रिड सिट्रस फल है जिसे प्यूर्टो रिको में उत्पन्न माना जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि इस फल को सर्वप्रथम स्कॉटलैंड के कार्लोस जो. मोस्कोसो ने 1956 में प्यूर्टोरिको के कॉफी के बागानों में देखा था। उन्होंने पाया कि सिटंस के कुछ पौधों में फल बड़े एवं चमकीले पीले रंग के थे जिसे बाद में संकर फल 'चिरोंजा' नाम दिया गया और कुछ समय बाद में इसका नाम ओरेंजेलो कर दिया गया। ओरेंजेलो के फल ग्रेप फ्रूट से मीठे एवं चमकीले होते हैं। इनके फलों से छिलका निकालना काफी आसान होता है। फल नाशपाती जितने आकार के या गोलाकार होते हैं। इनमें 9 से 13 फांकें होती हैं जिन्हें ग्रेपप्रूफट की तरह ही काटकर खाया जाता है।

अग्ली फ्रूट (Ugly Fruit)

अग्ली प्रूफट, ग्रेपफ्रूट, नारंगी एवं टेंजेरिन का संकर है। इसका नाम 'अग्ली' इसलिए पड़ा, क्योंकि इसके फल दिखने में भद्दे, कुरूप, बेढंगे, झुर्रीदार व हरे-पीले होते हैं। हालांकि, फल पकने पर नारंगी जैसे हो जाते हैं। ये ग्रेपफ्रूट से बड़े होते हैं, परंतु इनमें कम बीज होते हैं। इनका गूदा रसीला, टेंजेरिन की तरह मीठा एवं सुगंधित छिलके वाला होता है। इसका स्वाद नारंगी से खट्टा परंतु ग्रेपफ्रूट से कम कड़वा होता है। यह फल दिसंबर से अप्रैल तक मिलता है। संयुक्त राज्य अमेरिका एवं यूरोप में यह नवम्बर से अप्रैल में मिलता है।

लाइमक्वाट (Limequats)

लाइमक्वाट लाइम एवं कुमक्वेट का एक सिट्रोफोर्टेनेला संकर फल है, जिसे 'वाल्टर टेनीसन स्विंगल' ने 1909 में विकसित किया था। लाइमक्वाट एक छोटा सा झाड़ीनुमा पेड़ या पौधा होता है। इसकी पत्तियां नीबूवर्गीय फलों की तरह ही होती हैं। लाइमक्वाट में शुरू से भरप फल लगते हैं। फल छोटे-छोटे, अंडाकार एवं पीले-हरे होते हैं, जिनमें बहुत कम बीज होते हैं। इसका छिलका मीठा परंतु गूदा लाइम की तरह मीठा-कड़वा होता है। इसके सम्पूर्ण फल को खा सकते हैं या जूस एवं छिलके को अन्य

फलों के जूस को सुवास देने के लिए प्रयुक्त कर सकते हैं। इसके फलों में विटामिन 'सी' की अच्छी मात्रा होती है। लाइमक्वाट को घर के अंदर एवं बाहर कहीं भी लगाया जा सकता है। घर के अंदर लोग इसे गमलों में लगाते हैं। रोपण के 5-7 माह बाद ही इसमें पुष्पण व फलन शुरू हो जाता है। इस फल को अब जापान, इज़राइल, स्पेन, मलेशिया, दक्षिण अफ्रीका, यूनाइटेड किंगडम इंग्लैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका के कैलिफोर्निया, फ्लोरिडा और टेक्सास में उन क्षेत्रों में उगाया जा रहा है, जहां का तापमान 10°C से 30° सेल्सियस के बीच रहता हो। उगाया जाता है। लाइमक्वाट, सामान्यतः लाइम से अधिक परंतु कुमक्वेट से कम शीतरोधी होता है। लाइमक्वेट कम उम्र में भी भरपूर मात्रा में फल देता है। फल छोटा, अंडाकार, हरा-पीला होता है और इसमें बीज या पिप्स होते हैं। इसमें एक मीठी चखने वाला छिलका और एक कड़वा मीठा गूदा होता है जिसका स्वाद नीबू के समान होता है। फल को पूरा खाया जा सकता है या रस और छिलके का उपयोग स्वाद पेय और व्यंजनों के लिए किया जा सकता है। इसमें विटामिन सी की काफी मात्रा होती है और यह दृढ़ता से अम्लीय होता है। लाइमक्वाट की कुछ प्रमुख किस्में हैं: युस्टिस, लेकलैंड, तवारेस आदि हैं।

युज़ु (Yuzu)

युज़ु (साइट्रस जूनोस) जापानी युज़ु रूटेसी परिवार का एक खट्टे फल और पौधा है। ऐसा माना जाता है कि इसे मध्य चीन में मैंडरिन अ‍ॅरेंज और आइस पपेडा के हाइब्रिड के रूप में उत्पन्न किया गया था। कोरिया में युज़ु को युजा कहा जाता है जिसे कई कोरियाई व्यंजनों में प्रयोग किया जाता है। यह फल, संतरे एवं पपेड़ा के क्रॉस से तैयार संकर फल है, जो सिटंस वंश के रूटेसी कुल से संबंधित है। वैसे तो यह जापान में बहुत मशहूर फल है, परंतु कोरिया एवं चीन के लोग इसे खूब पसंद करते हैं। कोरिया के लोग इसे 'युजा' एवं चीनी लोग इसे 'क्सियांग चेंग' कहते हैं। युज़ु के पौधे छोटे आकार या झाड़ीनुमा होते हैं, जिनमें लंबे-लंबे कांटे होते हैं। पत्तियां बड़ी-बड़ी एवं खुशबूदार होती हैं। युज़ु के फल छोटे ग्रेपफ्रूट जैसे होते हैं, परंतु छिलका खुरदरा होता है। छिलके का रंग पीला या हरा होता है। इसके फलों में जबरदस्त महक और खुशबू होती है। यह नीबूवर्गीय फलों में अनोखा फल है, क्योंकि इसमें पाला सहने की अद्भुत क्षमता है। यह सर्दियों में -9° सेल्सियस तापमान को भी सह सकता है। युज़ु की उत्पति हालांकि चीन में हुई, परंत यह जापान में अधिक लोकप्रिय है। इस को तांग राजवंश के दौरान जापान एवं कोरिया में शुरू किया गया और अब इसे वहां व्यावसायिक स्तर पर उगाया जाता है। जापान में युज़ु का कई व्यंजनों में उपयोग करते हैं। इसे सॉस, सिरका, सीरप, चाय, दाल, मदिरा, चॉकलेट आदि में प्रयुक्त करते हैं। कोरिया में इसे मार्मेलेड एवं चाय बनाने में प्रयुक्त करते हैं। अब यह संयुक्त राज्य अमेरिका में भी लोकप्रिय हो रहा है। यहां लोग इसका जूस निकालते हैं।

टेंजोर (tangor)

यह नींबू वर्गीय फलों का एक संकर है, जो टेंजेरीन और नारंगी क्रॉस से विकसित किया गया है। यह नाम टैंगरीन के 'टेंज' और अ‍ॅरेंज के 'ओर' को मिलाकर रखा गया है। इसके फलों का छिलका बहुत मोटा होता है, जिसे आसानी से निकाला जा सकता है। गूदा

चमकीले नारंगी रंग का, खट्टा-मीठा और पूर्णत: सुवास वाला होता है। दुनिया के कई हिस्सों में टेंजोर एक कम प्रसिद्ध अर्थात कम जाना-पहचाना फल है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, इंडोनेशिया में काफी प्रचलित है। यही कारण है कि मर्कट, टेम्पल, किंग, हनी मर्कट, ऊमाटिल्ला, सेहोका आदि कई किस्में काफी लोकप्रिय हैं।

प्लमकोट (plumcot)

प्लमकोट एक संकर फल है जिसका एक भाग आलूबुखारा और दूसरा भाग खुबानी है। प्लमकोट के कई अलग-अलग प्रकार हैं। उनमें से कुछ लगभग आधा आलूबुखारा और आधा खुबानी हैं, जबकि अन्य ज्यादातर आलू बुखारा हैं। यूनिवर्सिटी अ‍ॅफ नेब्रास्का के एक जीवविज्ञानी डॉ. फ्लॉयड ज़ाइगर ने प्रूनस वंश की विभिन्न प्रजातियों के बीच संकरण से कई अंतरजातीय संकर विकसित

किए। इनमें 'प्लमकोट' और 'एप्रीप्लम', प्लम; प्रूनस सेलिसिना या प्रूनस सेरासिफेरा और खुबानी; प्रूनस आर्मिनियाका पहली पीढ़ी के संकर हैं। 'प्लूट' और 'एप्रीप्लम' बाद की पीढ़ियों के संकर हैं। डॉ. लूथर बरबैंक द्वारा इसे 'प्लमकोट' नाम दिया गया था। 'प्लमकोट' को कलिकायन द्वारा वानस्पतिक रूप से प्रवर्द्धित किया जा सकता है, लेकिन एप्रीप्लम में कभी नहीं। प्लमकोट कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका में बहुत लोकप्रिय है और जहां इसकी कई किस्में विकसित की गई हैं। एक प्रसिद्ध प्रकार के प्लमकोट को 'प्लूट' कहा जाता है, जो प्लमकोट के लिए एक ट्रेडमार्क नाम है जिसे 1980 के दशक में डॉ. फ्लॉयड ज़ाइगर द्वारा विकसित किया गया था। पहले प्लमकोट को 1800 के दशक के उत्तरार्ध में लूथर बरबैंक द्वारा विकसित किया गया था। प्लमकोट की प्रमुख किस्में हैं: प्लेवर्जा, फ्लेवर रॉयल, ईगल एग, एमिगो, क्रिमसन स्वीट, फ्लेवर क्वीन, फ्लेवर ग्रेनेड, ट्रॉपिकल सनराइज, किंग कांग, फ्लेवर किंग, फ्रॉलियर डॉव फॉल, आदि।

एप्रियम (Apriums)

प्लूट्स, एप्रियम, एप्रिल प्लम या प्लमकोट, कुछ अलग-अलग प्रूनस प्रजातियों के कुछ संकर फल हैं, जिन्हें इंटरसेप्ड प्लम भी कहा जाता है। एप्रियम, आलूबुखारे एवं खुबानी का जटिल संकर है, जो मुख्यतः खुबानी के गुणों एवं सुवास को प्रदर्शित करता है। आनुवांशिक रूप से एप्रियम, में एक-चोथाई यानि 25 प्रतिशत आलूबुखारा एवं तीन-चैथाई अर्थात 75 प्रतिशत खुबानी होता है। एप्रियम के संकर फल बाहर से खुबानी जैसे दिखते हैं। इसका गूदा घना और फ्रुक्टोज तथा अन्य शर्करा की एक उच्च सामग्री के कारण मीठा होता है। प्लूट्स के विपरीत एप्रियम सीजन में खुबानी की तरह बाजार में जल्दी आ जाता है। प्लूट्स की कुछ किस्में बहुत देरी से पकती हैं। एप्रियम के फल लाल आभा लिए सुनहरे होते हैं। इसकी भी कई किस्में विकसित की गई हैं। इनमें काफट-एन. केंडी, फ्लेवर डिलाइट, टेस्टी-रिच-एप्रियम आदि प्रमुख किस्में हैं।

टेबेरी (tayberry)

टेबेरी का फल मीठा, अधिक बड़ा और लॉगनबेरी की तुलना में अधिक सुगंधित होता है और यह ब्लैकबेरी एवं रेड रास्पबेरी का एक क्रॉस है। टेबेरी अर्थात टायबेरी (रुबस फ्रुटिकोसस x आर. इडेअस) रोसैसी परिवार के रूबस प्रजाति की एक संवर्धित झाड़ी है जिसे 1979 में ब्लैकबेरी और लाल रास्पबेरी के बीच एक क्रॉस के रूप में पेटेंट कराया गया था। इसका नाम स्कॉटलैंड में 'टे' नदी के नाम पर रखा गया है। टेबेरी का विकास स्कॉटलैंड बागवानी अनुसंधान संस्थान के डा. डेरेक एल. जेनिंग्स द्वारा किया गया। 5 साल के प्रयास के बाद, उन्होंने एक उपयुक्त रास्पबेरी संकर विकसित की और उसको अमेरिकी ब्लैकबेरी की 'अॅरोरा' किस्म के साथ क्रॉस किया जो टेबेरी कहलाई। इसी हाइब्रिड को 1979 में स्कॉटिश बागवानी अनुसंधान संस्थान द्वारा जारी किया गया था। टेबेरी, ब्लैकबेरी एवं रसभरी के संकरण से विकसित संकर फल है। इसके फल लोगनबेरी से मीठे, बड़े एवं सुगंधमय होते हैं। इसके फलों को मुख्यतः ताजा ही खाया जाता है एव इनकी तुड़ाई हाथों द्वारा की जा सकती है। हालांकि, टेबेरी का फल आसानी से हाथ से भी नहीं तोड़ा जा सकता है और न ही मशीन से भी इसकी हार्वेस्टिंग की जा सकती है, इसलिए ये फल व्यावसायिक रूप से उगाए जाने वाली बेरी की फसल नहीं बन सके हैं। परन्तु, घरेलू फसल के रूप में, इस पौधे को रॉयल हॉर्टिकल्चरल सोसाइटी का गार्डन मेरिट अवार्ड प्राप्त हुआ है। टेबेरी के फल 'कोन' की तरह लाल-बैंगनी रंग के होते हैं। ब्लैकबेरी की तरह तुड़ाई के बाद धानी फल से ही लगी रहती है। टेबेरी के फल लोगनबेरी से कम अम्लीय परंतु प्रबल सुवास वाले होते हैं। इसके फलों में कम कैलोरी लेकिन उच्च खाद्य फाइबर और एंटी-ऑक्सीडेंट होते हैं। टेबेरी का फल जाम, जेली और वाइन तैयार करने के लिए उपयोग किया जाता है।

प्लुओट्स (Pluots)

प्लूओट्स, एप्रियम, एप्रीप्लम्स, या प्लमकोट, कुछ प्रून प्रजातियों के बीच विभिन्न प्रजातियां हैं जिन्हें अन्तर्विषयक प्लम भी कहा जाता है। प्लुओट्स जापानी

आलूबुखारा, प्रूनस सलीसीना और खुबानी, प्रूनस आर्मेनिया के बीच क्रॉस है। प्लुओट्स प्लम, आलूबुखारा एवं खुबानी के बाद की पीढ़ी का संकर है। ये आनुवांशिक रूप से एक-चैथाई 25 प्रतिशत खुबानी एवं तीन-चैथाई अर्थात 75 प्रतिशतद्ध आलूबुखारे होते हैं। इसके फल बाहर से चिकने एवं दिखने में आलूबुखारे जैसे होते हैं। प्लुओट्स का विकास 20वीं सदी के अंत में फलोएड जैगर ने किया था। प्रूनस की विभिन्न प्रजातियों के संकरण से विकसित अंतर्राजातीय संकरों में सबसे लोकप्रिय प्लुओट्स हुआ है एवं वैज्ञानिकों द्वारा इसकी कई किस्में भी विकसित की गई हैं। प्लुओट्स की प्रमुख किस्में हैं: डेप्पल डेंडी, अर्ली डेप्पल, फ्रलेवर डिलाईट, फ्रलेवर फॉल, फ्रलेवर हर्ट, फ्रलेवर जेवल, फ्रलेवर किंग, फ्रलेवर रिच, फ्लेवर रॉयल, फ्लेवरोजा, रेड रेसल्स, आदि।

नेक्टाप्लम (Nectarine)

नेक्टाप्लम नेक्टेरिन और प्लम को क्रॉस करके फ्लोयड ज़ाइगर द्वारा विकसित की गई संकर फलों की किस्मों का एक ट्रेड नाम है। इस फल में नेक्टेरिन और प्लम दोनों के लक्षणों का आसानी से पता लगाया जा सकता है। यह एक सजावटी पेड़ से उगता है, लिहाजा यह पेड़ घर की बागवानी के लिए भी लोकप्रिय है, लेकिन वाणिज्यिक बाजार में इसका बड़ा नाम नहीं है। फ्लोयड ज़ाइगर द्वारा विकसित यह फल, नेक्टेरिन एवं आलूबुखारे का संकर है। इस संकर फल में नेक्टेरिन एवं आलूबुखारे दोनों के गुण होते हैं। यह मुख्यतः घर के आंगन या पिछवाड़े में उगाया जाता है। फल का छिलका चिकना एवं नेक्टेरिन जैसा दिखता है। नेक्टाप्लम में शर्करा अधिक होने के कारण यह अपनी मिठास एवं तीव्र सुवास के लिए जाना जाता है। स्पाइस ज़ी नामक इस की एक ही किस्म है जो थोड़ा अम्लीय होने के साथ मिठास से भरी हुई होती है और उसका सफेद गुद्दा और लाल-भूरे रंग का छिलका होता है। इसे जुलाई के उत्तरार्द्ध में हार्वेस्ट किया जाता है। पीकोटम भी आड़ू, खुबानी एवं आलूबुखारे का जटिल संकर फल है, जिसे जैगरज जेनेटिक्स नामक कम्पनी ने विकसित किया है। यह कम्पनी नये-नये संकर फलों के विकास के लिए जानी जाती है।

जोस्टाबेरी (Jostaberry)

जोस्टाबेरी एक जटिल संकर फल है, जो राईबस परिवार की तीन मूल प्रजातियों ब्लैक करंट, उत्तरी अमेरिकन ब्लैक गूजबेरी एवं यूरोपियन गूजबेरी के संकरण से 1977 में विकसित किया गया है। इसका पौधा लगभग 2 मीटर ऊंचा और लगभग ब्लैकबेरी जैसा होता है। इसमें पुष्पण बसंत के मध्य में शुरू हो जाता है, जबकि फलन का समय ब्लैक करंट से मिलता है। इस संकर फल में कई रोगों के प्रति रोगरोधिता है, जो राईबस वंश के अन्य फलों में नहीं होती है। उदाहरणार्थ यह फल मिल्ड्यू, पर्ण चित्ती, रस्ट रोगों एवं कलिपिटि का माइट के लिए रोधी है। इस संकर फल का प्रवर्धन मुख्यतः कलमों द्वारा होता है। इसके फल ब्लैकबेरी जैसे परंतु गूजबेरी से छोटे व ब्लैक करंट से कुछ बड़े होते हैं। इसे ताजा एवं पकाकर खाया जा सकता है। फलो का स्वाद गूजबेरी एवं ब्लैक करंट के बीच का होता है। इसके पके फल कई दिनों तक पौधों पर बने रहते हैं, परंतु पक्षी भी इन को बड़े चाव से खाते हैं जिसके चलते ये बहुत शीघ्र क्षतिग्रष्ट भी हो जाते हैं। यह फल विटामिन 'सी' का एक उच्च स्रोत है। यह फल यांत्रिक तुड़ाई के लिए उपयुक्त फल नहीं है, इसलिए इसका व्यावसायिक उत्पादन नही हो पा रहा है। अन्य फलों की अपेक्षा जोस्टाबेरी के फलों की तुड़ाई श्रमकारी है, क्योंकि इसके फल ब्लैक करंट की अपेक्षा पौधे से दृढ़ता से लगे होते हैं।

लोगनबेरी (loganberry)

लोगानबेरी (रुबस × लोगानोबैकस) उत्तरी अमेरिकी ब्लैकबेरी (रूबस उर्सिनस) और यूरोपीय रास्पबेरी (रूबस इडेअस) का एक संकर है। इसके पौधे और फल रसभरी की तुलना में ब्लैकबेरी से अधिक मिलते जुलते हैं, लेकिन इसके फलों का रंग काले रंग के ब्लैकबेरी की अपेक्षा गहरे लाल रंग का होता है। लोगनबेरी जेम्स हार्वे लोगन के बेरी

प्रजनन के प्रयास की एक दुर्घटना थी, जिसके लिए इस फल का नाम उनके नाम पर दिया गया है और अब इसी नाम से ही इसकी वाणिज्यिक रूप से और बागवानों द्वारा खेती की जाती है।

लोगनबेरी का विकास ब्लैकबेरी एवं रसभरी के संकरण से हुआ है। इस फल का विकास ब्लैकबेरी की अष्टगुणित किस्म 'औंगीन्बौघ' एवं रसभरी की द्विगुणित किस्म रेड एंटवर्प के संकरण से हुआ। यह एक षट्गुणित फल है। इसका विकास सांताक्रूज़, कैलिफोर्निया में अमेरिका के प्रसिद्ध जज एवं बागवानी विशेषज्ञ, जेम्स हार्वे लोगन द्वारा किया गया था। ऐसा बताया जाता है कि लोगन अपने घर की बगिया में लगी ब्लैकबेरी की किस्मों से संतुष्ट नहीं थे। इसलिए उन्होंने ब्लैकबेरी की दो किस्मों में संकरण करवाया ताकि ब्लैकबेरी की कोई अच्छी किस्म विकसित हो सके। इस तरह से तैयार पौधों को उन्होंने वहीं घर की बगिया में लगे लाल रसभरी के पौधों के पास में लगा दिया, जो एक ही समय पुष्पित एवं फलते थे। उनके प्राकृतिक संकरण से कुछ बीज मिले जिन्हें लोगन ने एक खेत में बोया। उन्होने पाया कि जो पौधे उगे उनमें से 50 ब्लैकबेरी जैसे थे, परंतु वे बड़े एवं ओजस्वी थे। इन्हीं का नाम लोगनबेरी रखा गया। लोगनबेरी की मूल संतति को 1897 में यूरोप में आयातित किया गया। 1933 में इसी से कांटेरहित लोगनबेरी को 'अमेरिकन थोर्नलेस' उत्परिवर्तन द्वारा विकसित किया गया। यूरोपीय देशों में तो यह फल काफी लोकप्रिय है, परंतु भारत में यह फल मात्र अनुसंधान केंद्रों तक ही सीमित है।

लोगनबेरी के पौधे अन्य बेरीज के पौधों से सहिष्णु होते हैं एवं उन्हें कोई भी रोग या कीट क्षति नहीं पहुंचाते। फिर भी वे बागवानों में कई कारणों से लोकप्रिय नहीं हो रहे हैं। लोकप्रिय न होने के प्रमुख कारण हैंः तुड़ाई एवं सामयिक कार्यों के लिए अधिक श्रम की आवश्यकता। पौधों में कांटे होते हैं एवं फल भी पत्तियों में छुपे रहते हैं। इसके अतिरिक्त फल एक साथ नहीं पकते हैं। अतः फलों की तुड़ाई एक बार में नहीं हो सकती है। यही कारण है कि लोगनबेरी को लोग अपने घर की बगिया में ही लगाते हैं। लोगनबेरी की लताएं ब्लैकबेरी या रसभरी जैसी होती हैं। वे धरातल पर ड्यूबेरी की तरह रेंगती हुई बढ़ती हैं। इसकी लता काफी मजबूत होती है एवं कभी-कभी बिना सिंचाई के भी एक सीजन मे 8-10 फुट तक वृद्धि कर जाती है। प्रति लता कुल वृद्धि लगभग 40 से 50 फुट तक हो जाती है। लोगनबेरी की लताएं काफी मजबूत होती हैं, जिन पर ब्लैकबेरी की तरह बड़े एवं नुकीले कांटे नहीं होते बल्कि रसभरी की तरह मुलायम एवं छोटे कांटे होते हैं। पत्तियां गहरी हरी, मोटी एवं रसभरी की पत्तियों जैसी होती हैं। इसके फल, ब्लैकबेरी के सबसे बड़े फल जितने बड़े होते हैं एवं पकने पर उनका रंग गहरा चमकीला लाल हो जाता है। फल का सुवास ब्लैकबेरी व रसभरी दोनों के सुवास का मिश्रण होता है। लोगनबेरी के फल प्रोटीन एवं कार्बोहाईड्रेट्स के अच्छे स्रोत माने जाते हैं। इसके फल, फ़ूड फाइबर एवं कैल्शियम, पोटेशियम तथा विटामिन 'सी' के बहुत अच्छे स्रोत हैं। कोलेस्ट्रॉल न होने के कारण यह दिल के रोगियों के लिए अति उत्तम माने जाते हैं।

टायबेरी (tayberry)

टायबेरी इनके समान रास्पबेरी-ब्लैकबेरी का हाइब्रिड है। 1905 में डॉ लूथर बरबैंक द्वारा विकसित 'फेनोमेनल' बेरी या 'बर्बैंक के लोगन' भी एक रास्पबेरी-ब्लैकबेरी का हाइब्रिड है, लेकिन ब्लैकबेरी और रास्पबेरी के बीच पहली दो पीढ़ी के क्रॉस को फिर एक-दूसरे को पार करके यह दूसरी पीढ़ी

बनाई गई है। अन्य समान संकरों में नेस्बेरी, जो एक ओसबेरी एवं एक लाल रास्पबेरी के बीच एक क्रॉस है और यंगबेरी ब्लैकबेरी, रास्पबेरी और डुयबेरी के बीच एक तीन-रास्ता क्रॉस है। लोगन बेरी को विभिन्न रूबस प्रजातियों के बीच अधिक हाल के क्रॉस में जनक के रूप में इस्तेमाल किया गया है, जैसे बॉयसेंबेरी (लोगनबेरी × रास्पबेरी × ब्लैकबेरी)। सैंटियम ब्लैकबेरी (लोगनबेरी × कैलिफ़ोर्निया ब्लैकबेरी (आर.यूर्सिनस), और ओलिवबेरी (ब्लैक लोगन × यंगबेरी) आदि। लोगनबेरी की पैतृक रेखा की मैरिनबेरी ओर जाती है जो एक आम और लोकप्रिय बेरी है और इसे मुख्य रूप से ओरेगन में उगाया जाता है।

पाईनबेरी (Pineberry)

पाइनबेरी एक कृषक सफेद स्ट्रॉबेरी है जिसमें अनानास जैसा स्वाद और लाल बीज होते हैं। पाइनबेरी फ्रैगरिया चिलिलेंसिस और फ्रैगरिया वर्जिनिया का एक संकर क्रॉस है। पाईनबेरी, दक्षिणी यूरोप की सफ़ेद स्ट्रॉबेरी एवं कृष्य, लाल स्ट्रॉबेरी के क्रॉस से उत्पन्न संकर फल है। ये पहली बार 2002 के आसपास दक्षिण अमेरिका में पाए गए जबकि, अब वे बेल्जियम में उगाए जाते हैं और नीदरलैंड से निर्यात किए जाते हैं। इस फल का व्यावसायिक उत्पादन 2010 में नीदरलैंड एवं बेल्जियम में शुरू हुआ। पाईनबेरी के फल स्ट्रॉबेरी से छोटे लगभग 15-23 मि.मी. के बीच के होते हैं। जब ये पकते हैं तो ये बिलकुल सफ़ेद होते हैं, परंतु इनके बीज लाल रंग के होते हैं। इसके पौधे रोगरोधी एवं बेहद कीमती होते हैं। इसके फलों में अनन्नास जैसा सुवास होता है। देखने में ये बिल्कुल स्ट्रॉबेरी जैसे दिखते हैं, मानो ये स्ट्रॉबेरी के अल्बिनो रंजकहीन फल हों। पाइनबेरी को पहली बार 2012 में संयुक्त राज्य अमेरिका में व्यावसायिक रूप से बेचा गया था। यह यूरोप और दुबई में रेस्तरां, बेकरी और थोक बाजारों में बेचा जा रहा है। बेरी को यूनाइटेड किंगडम के बाजार के लिए 'पाइनबेरी' करार दिया गया था, जहां यह 2010 में स्ट्रॉबेरी के रूप में प्रदर्शित होने पर अपने अनानास जैसे स्वाद को प्रतिबिंबित करने के लिए उपलब्ध हो गया था।

---

* लेखिकाएं करनाल स्थित महाराणा प्रताप बागवानी विश्वविद्यालय में पीएचडी स्कॉलर हैं।

HAPPINESS, MADE!

AMYLOSTAR

Low Moisture Starch (less than 6.5%)

Applications

Snacks
Soup Premix
Breakfast Premix
Baking Powder
Seasoning Mix

Benefits

Free flowing powder
Lower risk of microbial contamination
Improved shelf life
Improved texture
Mouthfeel, increased creaminess

BLUCIDEX

Maltodextrin Powder

Applications

Snacks
Chocolates & confectionery
Milk & bakery products
Energy drinks & bars
Baby food & pharmaceuticals

Functionality

Improves mouthfeel
Thickening, viscosifying, and binding agent
Inhibits crystallization
Mild sweet taste

Bluecraft Agro makes ingredients for a happy life!

Our low-moisture starch and maltodextrin powder are made from the choicest of maize and through a stringent, accredited production process. We are focussed on enhancing your products' value proposition and delighting your customers through superior quality, taste and overall brand experience.

sulochana.sharma@bluecraftagro.com

+91 - 98962 15952

linkedin.com/company/bluecraft-agro-private-limited/

bluecraftagro.com

MARKETING OFFICE:
Bluecraft Agro Pvt. Ltd.
Plot No. - 15, 2nd Floor, B-2B Block, Janak Puri, New Delhi - 110058

Plant Address :
M/s Bluecraft Agro Pvt. Ltd.
Radaur Road, Yamunanagar-135001

SAVE ENVIRONMENT

Courtesy:-

THE MANAKPUR INDUSTRIAL WELFARE ASSOCIATION

HSIIDC IE Manakpur, Jagadhari - 135 003
Dist - Yamunanagar (Haryana)

President
Sh. Pawan Soni
M: 9896045527

Secretary
Sh. Atul Dhingra
M: 9355450850

Cashier
Sh. Sanjay Sharma
M : 9355126510

Email : hsiidcmanakpur.association@gmail.com
Office : Plot No. 136, HSIIDC, Manakpur, Jagadhari